सूरह अल नूर

तम्हीदी कलिमात

मक्की सूरतों के एक तवील सिलसिले (सूरह युनुस से सूरतुल मोमिनून) के बाद अब हम एक मदनी सूरत का मुताअला करने जा रहे हैं, जो इस ग्रुप की आख़री सूरत है। अग़रचे बाज़ लोग चौदह सूरतों के इस ग्रुप में से सूरतुर्रअद और सूरतुल हज को मदनी क़रार देते हैं मगर जो लोग मक्की और मदनी सूरतों के मिज़ाज से वाक़फ़ियत रखते हैं वो जानते हैं कि इनमें से कोई भी मदनी सूरत नहीं है, अलबत्ता यह मुम्किन है कि इनमें कहीं-कहीं कुछ आयात मदनी हों।

सूरतुन्नूर का नुज़ूल 6 हिजरी में हुआ। इसमें हज़रत आयशा रज़ि. पर तोहमत लगाये जाने वाली साज़िश को भी बे-नक़ाब किया गया है और हज़रत आयशा रज़ि. की बेगुनाही साबित की गई है। इस साज़िश के पीछे मदीने के मुनाफ़िक़ीन का पूरा गिरोह था, लेकिन इसमें बुनियादी किरदार रईसुल मुनाफ़िक़ीन अब्दुल्लाह बिन उबई का था। बदक़िस्मती से कुछ सादा लौ मुसलमान भी मुनाफ़िक़ीन के इस प्रोपगंडा से मुतास्सिर हो गये थे। बिला शुबह यह सब कुछ हज़रत आयशा रज़ि. और ख़ुद हुज़ूर ﷺ के लिए बहुत ज़्यादा तकलीफ़ और कुर्ब का बाइस बना।

निस्बते ज़ौजियत के ऐतबार से सूरतुन्नूर का ताल्लुक़ सूरतुल अहज़ाब के साथ है और दोनों सूरतों के मज़ामीन में गहरी मुशाबिहत पाई जाती है। सूरतुल अहज़ाब चूँकि सूरतुन्नूर से पहले (5 हिजरी में) नाज़िल हुई थी इसलिए उसकी आयात सूरतुन्नूर की आयात की निस्बत क़द्रे छोटी हैं। इस वजह से सूरतुल अहज़ाब की आयात की तादाद अग़रचे ज़्यादा है मगर दोनों सूरतों के रुकूआत की तादाद (9,9) बराबर है और हुज्म भी तक़रीबन एक जैसा है। दोनों सूरतों में नम्बर 35 पर जो आयात हैं वो ईमान और इस्लाम की हक़ीक़त के हवाले से ख़ुसूसी अहमियत की हामिल हैं।

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

आयात 1 से 10 तक

سُوْرَةٌ اَنْزَلْنٰهَا وَفَرَضْنٰهَا وَاَنْزَلْنَا فِيْهَآ اٰيٰتٍ بَيِّنٰتٍ لَّعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ Á الزَّانِيَةُ وَالزَّانِيْ فَاجْلِدُوْا كُلَّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا مِائَةَ جَلْدَةٍ ۠ وَّلَا تَاْخُذْكُمْ بِهِمَا رَاْفَةٌ
فِيْ دِيْنِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۚ وَلْيَشْهَدْ عَذَابَهُمَا طَاۗىِٕفَةٌ مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ Ą الزَّانِيْ لَا يَنْكِحُ اِلَّا زَانِيَةً اَوْ مُشْرِكَةً ۡ وَّالزَّانِيَةُ لَا
يَنْكِحُهَآ اِلَّا زَانٍ اَوْ مُشْرِكٌ ۚ وَحُرِّمَ ذٰلِكَ عَلَي الْمُؤْمِنِيْنَ Æ وَالَّذِيْنَ يَرْمُوْنَ الْمُحْصَنٰتِ ثُمَّ لَمْ يَاْتُوْا بِاَرْبَعَةِ شُهَدَاۗءَ فَاجْلِدُوْهُمْ ثَمٰنِيْنَ جَلْدَةً وَّلَا
تَقْبَلُوْا لَهُمْ شَهَادَةً اَبَدًا ۚ وَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ Ć اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ وَاَصْلَحُوْا ۚ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ Ĉ وَالَّذِيْنَ يَرْمُوْنَ
اَزْوَاجَهُمْ وَلَمْ يَكُنْ لَّهُمْ شُهَدَاۗءُ اِلَّآ اَنْفُسُهُمْ فَشَهَادَةُ اَحَدِهِمْ اَرْبَعُ شَهٰدٰتٍ بِاللّٰهِ ۙ اِنَّهٗ لَمِنَ الصّٰدِقِيْنَ Č وَالْخَامِسَةُ اَنَّ لَعْنَتَ اللّٰهِ عَلَيْهِ اِنْ كَانَ مِنَ
الْكٰذِبِيْنَ Ċ وَيَدْرَؤُا عَنْهَا الْعَذَابَ اَنْ تَشْهَدَ اَرْبَعَ شَهٰدٰتٍ بِاللّٰهِ ۙ اِنَّهٗ لَمِنَ الْكٰذِبِيْنَ Ď وَالْخَامِسَةَ اَنَّ غَضَبَ اللّٰهِ عَلَيْهَآ اِنْ كَانَ مِنَ
الصّٰدِقِيْنَ Ḑ وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ وَاَنَّ اللّٰهَ تَوَّابٌ حَكِيْمٌ 10

आयत 1

سُوْرَةٌ اَنْزَلْنٰهَا وَفَرَضْنٰهَا

"यह एक अज़ीम सूरत है, हमने इसको नाज़िल किया है और इसको (तुम पर) फ़र्ज़ किया है"

सूरत के आग़ाज़ का यह अंदाज़ तमाम सूरतों में मुनफ़रिद है। "सूरतुन" का लफ़्ज़ यहाँ पर बतौर इस्म नकरह इस्तेमाल हुआ है। इसको अगर तफ्खीम के लिए माना जाये तो इसके मायने यूँ होंगे कि यह एक अज़ीम सूरत है।

وَاَنْزَلْنَا فِيْهَآ اٰيٰتٍ بَيِّنٰتٍ لَّعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ Á ۝

"और हमने इसमें बड़ी रौशन आयात नाज़िल की हैं ताकि तुम नसीहत हासिल करो।"

आयत 2

اَلزَّانِيَةُ وَالزَّانِيْ فَاجْلِدُوْا كُلَّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا مِائَةَ جَلْدَةٍ ۠

"ज़िना करने वाली औरत और ज़िना करने वाले मर्द, दोनों में से हर एक को सौ-सौ कोड़े मारो"

وَّلَا تَاْخُذْكُمْ بِهِمَا رَاْفَةٌ فِيْ دِيْنِ اللّٰهِ

"और तुम्हें ना रोके उनके साथ मेहरबानी अल्लाह के दीन (की तन्फ़ीज़) के मामले में"

यह अल्लाह के दीन और उसकी शरीअत का मामला है। ऐसे मामले में हद जारी करते हुए किसी के साथ किसी का ताल्लुक़, इंसानी हमदर्दी या फ़ितरी नर्म दिली वग़ैरह कुछ भी आड़े ना आने पाये।

اِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۚ

"अगर तुम ईमान रखते हो अल्लाह पर और यौमे आख़िरत पर।"

यह ग़ैर शादीशुदा ज़ानी और ज़ानिया के लिए हद है जो नस क़ुरानी से साबित है। अलबत्ता शादीशुदा ज़ानी और ज़ानिया की सज़ा रज्म है जो सुन्नते रसूल ﷺ से साबित है और क़ुरान के साथ-साथ सुन्नते रसूल ﷺ भी शरीअते इस्लामी का एक मुस्तक़िल बिज़्ज़ात माख़ज़ है। रज्म की सज़ा का क़ायदा और उसूल यह है कि शरीअते मूसवी अलै. में यह सज़ा मौजूद थी और हुज़ूर ﷺ ने साबक़ा शरीअत के ऐसे अहकाम जिनकी क़ुरान में नफ़ी नहीं की गई अपनी उम्मत में ज्यों कि त्यों जारी फ़रमाए हैं। इनमें रज्म और क़त्ले मुर्तद के अहकाम ख़ासतौर पर अहम हैं। शादीशुदा ज़ानी और ज़ानिया के लिये रज्म की सज़ा मुतअद्दिद अहादीस, रसूल अल्लाह ﷺ की सुन्नत, खुल्फ़ा-ए- राशिदीन के तआममुल और इज्मा-ए-उम्मत से साबित है।

وَلْيَشْهَدْ عَذَابَهُمَا طَآئِفَةٌ مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ Ą ۝

"और चाहिए की उन दोनों की इस सज़ा के वक़्त अहले ईमान का एक गिरोह मौजूद रहे।"

इस हद को आम पब्लिक में खुलेआम जारी करने का हुक्म है। इससे यह उसूल ज़हन नशीन कर लेना चाहिए कि इस्लामी शरीअत दरअसल ताज़ीरात और हुदूद को दूसरों के लिए लायक़-ए-इबरत बनाना चाहती है। अगर किसी मुजरिम का जुर्म साबित होने के बाद चुपके से फाँसी दे दी जाये और लोग

उसे एक ख़बर के तौर पर सुने तो उनके ज़हनों में इसका वो तास्सुर क़ायम नहीं होगा जो उस सज़ा के अमल को बराहेरास्त देखने से होगा। अगर किसी मुजरिम को सरेआम तख़्तादार पर लटकाया जाये तो उससे कितने ही लोगों के होश ठिकाने आ जायेंगे। चुनाँचे इस्लामी शरीअत सज़ाओं के तसव्वुर को मआशरे में एक मुस्तक़िल सद्देराह (deterrent) के तौर पर मौअस्सर देखना चाहती है। इसमें बुनियादी फ़लसफ़ा यही है कि एक को सज़ा दी जाये तो लाखों के लिए बाइसे इबरत हो।

आयत 3

الزَّانِي لَا يَنكِحُ إِلَّا زَانِيَةً أَوْ مُشْرِكَةً ۚ

"ज़ानी मर्द को रवा नहीं कि वो निकाह करे मगर किसी ज़ानिया ही से या मुशरिका से"

यह हुक्म क़ानून के दर्जे में नहीं बल्कि अख्लाक़ के दर्जे में हैं। यानि इस शर्मनाक और घिनौने जुर्म का इरतकाब करके उस शख़्स ने साबित कर दिया है कि वो किसी पाक दामन, इफ़्फ़त माब मोमिना के लायक़ है ही नहीं। चुनाँचे उसे चाहिए कि वह इस क़ानूनी बंधन के लिए भी अपने जैसी ही किसी बदकार औरत या फिर मुशिरका औरत का इन्तख़ाब कर ले।

وَالزَّانِيَةُ لَا يَنكِحُهَا إِلَّا زَانٍ أَوْ مُشْرِكٌ ۚ وَحُرِّمَ ذَٰلِكَ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ

"और ज़ानिया औरत भी इस लायक़ नहीं कि उससे कोई निकाह करे मगर सिर्फ़ बदकार मर्द या कोई मुशरिक। और हराम कर दिया गया है यह (ज़ानी और ज़ानिया से निकाह) मोमिनीन पर।"

आयत 4

وَالَّذِينَ يَرْمُونَ الْمُحْصَنَاتِ

"और वो लोग जो पाक दामन औरतों पर ज़िना की तोहमत लगायें"

"मुहसनात" से मुराद ख़ानदानी औरतें भी हैं और मन्कूहा औरतें भी। गोया औरतों के हक़ में इहसान (हिफ़ाज़त का हिसार) की दो सूरतें हैं। जो औरतें किसी मौअज्ज़ज़ और शरीफ़ ख़ानदान से ताल्लुक़ रखतीं हैं वो अपने इस ख़ानदान की हिफ़ाज़त के हिसार में हैं और जो किसी के निकाह की क़ैद में हैं उन्हें अपने खाविंद और निकाह के इस ताल्लुक़ की हिफ़ाज़त हासिल है। इस तरह ख़ानदानी मन्कूहा ख़ातून को दोहरा "इहसान" हासिल होता है। चुनाँचे अगर कोई शख़्स किसी पाक दामन ख़ानदानी या मन्कूहा औरत पर ज़िना का इल्ज़ाम लगाये और:

ثُمَّ لَمْ يَأْتُوا بِأَرْبَعَةِ شُهَدَاءَ فَاجْلِدُوهُمْ ثَمَانِينَ جَلْدَةً

"फिर वो ना ला सकें चार गवाह, तो ऐसे लोगों को लगाओ अस्सी कोड़े"

وَّلَا تَقْبَلُوْا لَهُمْ شَهَادَةً اَبَدًا ۚ وَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۙ Ć

"और आइन्दा कभी उनकी शहादत क़ुबूल ना करो। और यही लोग फ़ासिक़ हैं।"

अगर कोई शख़्स किसी पाक दामन ख़ातून पर बदकारी का इल्ज़ाम लगाये तो उस पर लाज़िम है कि वो चार चश्मदीद ग़वाह पेश करे। अगर वो इसमें नाकाम रहता है तो उसके इस इल्ज़ाम को बोहतान तसव्वुर किया जायेगा, और ज़िना के बोहतान की सज़ा के तौर पर उसे अस्सी (80) कोड़े लगाये जायेंगे। शरीअत में इसे "हद्दे क़ज़फ़" कहा जाता है।

देखा जाये तो यह सज़ा ज़िना की सज़ा (सौ कोड़े) के करीब ही पहुँच जाती है। इसमें बज़ाहिर यह हिकमत नज़र आती है कि ख़्वाह-म-ख़्वाह बुराई की तशहीर ना हो। दरअसल बुराई का चर्चा भी मआशरे के लिए बुराई ही की तरह ज़हरनाक है और शरीअत का मक़सूद इस ज़हरनाकी का सद्दे बाब करना है। इस सिलसिले में शरीअत का तक़ाज़ा यह है कि अगर कहीं ऐसी गलती का इरतकाब हो तो क़सूरवार अफ़राद को क़ानून के मुताबिक़ सख़्त सज़ा दी जाये। लेकिन अगर किसी क़ानूनी सुक़्म की वजह से या गवाहों की अदम दस्तयाबी के बाइस जुर्म साबित ना हो सकता हो और मुजरिम को कैफ़रे किरदार तक पहुँचना मुमकिन ना हो तो फिर बेहतर है कि इस सिलसिले में ख़ामोशी इख़्तियार की जाये और बुराई की तशहीर करके मआशरे की फ़िज़ा में हैजानी कैफ़ियत पैदा करने से इज्तनाब किया जाये।

आयत 5

اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ وَاَصْلَحُوْا ۚ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ Ĉ

"सिवाय उन लोगों के जो तौबा कर लें उसके बाद और अपनी इस्लाह कर लें, तो यक़ीनन अल्लाह ग़फ़ूर है, रहीम है।"

मसलन किसी शख़्स पर क़ज़फ़ की हद जारी की गई और इस्लामी अदालत में तवील अरसे तक उसकी ग़वाही भी ना-क़ाबिले क़ुबूल रही, लेकिन सज़ा मिलने के बाद उस शख़्स ने अल्लाह के हुज़ूर तौबा कर ली और अपनी पुरानी रविश को मुस्तक़िल तौर पर तब्दील कर लिया। उसके मुस्बत रवैय्ये को देखते हुए मआशरे में फिर से उसे एक बा-ऐतमाद, सालेह और परहेज़गार मुसलमान के तौर पर तस्लीम कर लिया गया। अब ऐसे शख़्स पर से ग़वाही की ना-क़ाबिले क़ुबूल होने की क़दगन ख़त्म हो सकती है।

आयत 6

وَالَّذِيْنَ يَرْمُوْنَ اَزْوَاجَهُمْ وَلَمْ يَكُنْ لَّهُمْ شُهَدَاۗءُ اِلَّآ اَنْفُسُهُمْ

"और वो लोग जो अपनी बीवियों पर ज़िना का इल्ज़ाम लगायें और उनके पास अपनी ज़ात के सिवा और ग़वाह ना हों"

यानि अगर कोई शख़्स अपनी बीवी को बदकारी का इरतकाब करते हुए देख ले और उसके पास अपने आलावा मौक़े के तीन और ग़वाह भी ना हों तो वो क्या करे? चूँकि मामला उसकी अपनी बीवी का है इसलिए वो ख़ामोशी इख़्तियार करके उसके साथ रह भी नहीं सकता। आम हालात में तो अगर

कोई शख़्स अपने आलावा तीन चश्मदीद ग़वाहों के बग़ैर किसी पर ऐसा इल्ज़ाम लगाये तो उसे अस्सी (80) कोड़ों की सज़ा दी जायेगी, लेकिन मियाँ-बीवी के मामले में ऐसी सूरतेहाल के लिए यहाँ एक ख़ुसूसी क़ानून दिया गया है जिसे इस्तलाह में "लिआन" कहा जाता है।

فَشَهَادَةُ اَحَدِهِمْ اَرْبَعُ شَهٰدٰتٍ بِاللّٰهِ ۙ اِنَّهٗ لَمِنَ الصّٰدِقِيْنَ

"तो ऐसे एक शख़्स की ग़वाही यह है कि अल्लाह की क़सम के साथ चार बार ग़वाही दे कि वो यक़ीनन सच्चा है।"

ऐसे शख़्स से तक़ाज़ा यह है कि वो अल्लाह की क़सम खाकर चार दफ़ा वाक़िये की गवाही दे और दावा करे कि वो जो कुछ कह रहा है सच कह रहा है।

आयत 7

وَالْخَامِسَةُ اَنَّ لَعْنَتَ اللّٰهِ عَلَيْهِ اِنْ كَانَ مِنَ الْكٰذِبِيْنَ

"और पाँचवीं बार यह कहे कि उस पर अल्लाह की लानत हो अगर वो झूठा हो।"

इस तरह ऐसे शख़्स की मज़कूरा गवाही चार ग़वाहों के बराबर समझी जायेगी।

आयत 8

وَيَدْرَؤُا عَنْهَا الْعَذَابَ اَنْ تَشْهَدَ اَرْبَعَ شَهٰدٰتٍ بِاللّٰهِ ۙ اِنَّهٗ لَمِنَ الْكٰذِبِيْنَ

"और उस औरत से यह बात सज़ा को टाल सकती है कि वो चार दफ़ा गवाही दे अल्लाह की क़सम के साथ कि वो (उसका शौहर) यक़ीनन झूठा है।"

आयत 9

وَالْخَامِسَةَ اَنَّ غَضَبَ اللّٰهِ عَلَيْهَآ اِنْ كَانَ مِنَ الصّٰدِقِيْنَ

"और पाँचवी दफ़ा यह कहे कि मुझ पर अल्लाह का ग़ज़ब हो अगर वो सच्चा हो।"

अगर शौहर चार दफ़ा अल्लाह की क़सम खाकर इल्ज़ाम में अपनी सच्चाई की ग़वाही दे दे और पाँचवी दफ़ा यह भी कह दे कि अगर वो झूठा हो तो उस पर अल्लाह की लानत हो तो उसकी तरफ़ से चार गवाह पेश करने का क़ानूनी तक़ाज़ा पूरा हो गया। उसके बाद मुतालक़ा औरत को सफ़ाई का मौक़ा दिया जायेगा। अगर वो इस इल्ज़ाम को तस्लीम कर ले या ख़ामोश रहे तो उस पर हद जारी कर दी जायेगी, लेकिन अगर वो इससे इंकार करे तो उसे भी अल्लाह की क़सम खाकर चार मर्तबा यह कहना होगा कि उसका शौहर झूठ बोल रहा है और पाँचवी मर्तबा यह कहना होगा कि अगर वो अपने इल्ज़ाम में सच्चा हो तो मुझ पर अल्लाह का ग़ज़ब नाज़िल हो। अगर वो औरत ऐसा कह दे तो उस पर हद जारी नहीं की जायेगी और वो दुनिया की

सज़ा से बच जायेगी। अलबत्ता इसके बाद उनके दरमियान तलाक़ वाक़ेअ हो जायेगी और वो दोनों बतौर मियाँ-बीवी इकठ्ठे नहीं रह सकेंगे।

आयत 10

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ

"और अगर तुम लोगों पर अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी रहमत ना होती"

وَاَنَّ اللّٰهَ تَوَّابٌ حَكِيْمٌ ۝10

"और यह कि अल्लाह बहुत तौबा क़ुबूल करने वाला, बहुत हिकमत वाला है।"

यहाँ पर कुछ अल्फ़ाज़ मुक़द्दर (understood) माने गये हैं। गोया तक़दीर इबारत यूँ है कि अगर अल्लाह तआला का फ़ज़ल व करम और उसकी रहमत तुम लोगों के शामिल हाल ना होती और यह बात ना होती कि अल्लाह तौबा क़ुबूल फ़रमाने वाला और साहिबे हिकमत है तो बीवियों पर इल्ज़ाम का मामला तुम्हें गलत रास्ते पर डाल देता है और तुम कोई बहुत बड़ा क़दम उठा लेते।

इन इब्तदाई आयात की सूरत में उस वाक़िये की तम्हीद बयान हुई है जो आगे आ रहा है।

आयात 11 से 20 तक

اِنَّ الَّذِيْنَ جَاۗءُوْ بِالْاِفْكِ عُصْبَةٌ مِّنْكُمْ ۭ لَا تَحْسَبُوْهُ شَرًّا لَّكُمْ ۭ بَلْ هُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۭ لِكُلِّ امْرِی مِّنْهُمْ مَّا اكْتَسَبَ مِنَ الْاِثْمِ ۚ وَالَّذِيْ تَوَلّٰى كِبْرَهٗ مِنْهُمْ لَهٗ عَذَابٌ
عَظِيْمٌ ۝11 لَوْلَآ اِذْ سَمِعْتُمُوْهُ ظَنَّ الْمُؤْمِنُوْنَ وَالْمُؤْمِنٰتُ بِاَنْفُسِهِمْ خَيْرًا ۙ وَّقَالُوْا هٰذَآ اِفْكٌ مُّبِيْنٌ ۝12 لَوْلَا جَاۗءُوْ عَلَيْهِ بِاَرْبَعَةِ شُهَدَاۗءَ ۚ فَاِذْ لَمْ
يَاْتُوْا بِالشُّهَدَاۗءِ فَاُولٰۗىِٕكَ عِنْدَ اللّٰهِ هُمُ الْكٰذِبُوْنَ ۝13 وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ لَمَسَّكُمْ فِيْ مَآ اَفَضْتُمْ فِيْهِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ
۝14 اِذْ تَلَقَّوْنَهٗ بِاَلْسِنَتِكُمْ وَتَقُوْلُوْنَ بِاَفْوَاهِكُمْ مَّا لَيْسَ لَكُمْ بِهٖ عِلْمٌ وَّتَحْسَبُوْنَهٗ هَيِّنًا ڰ وَّهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظِيْمٌ ۝15 وَلَوْلَآ اِذْ سَمِعْتُمُوْهُ قُلْتُمْ
مَّا يَكُوْنُ لَنَآ اَنْ نَّتَكَلَّمَ بِهٰذَا ڰ سُبْحٰنَكَ هٰذَا بُهْتَانٌ عَظِيْمٌ ۝16 يَعِظُكُمُ اللّٰهُ اَنْ تَعُوْدُوْا لِمِثْلِهٖٓ اَبَدًا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۚ ۝17 وَيُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ
الْاٰيٰتِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝18 اِنَّ الَّذِيْنَ يُحِبُّوْنَ اَنْ تَشِيْعَ الْفَاحِشَةُ فِي الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۙ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۭ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ
۝19 وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ وَاَنَّ اللّٰهَ رَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ۝20

आयत 11

اِنَّ الَّذِيْنَ جَاۗءُوْ بِالْاِفْكِ عُصْبَةٌ مِّنْكُمْ ۭ

"जो लोग यह बोहतान गढ़ लाये हैं, यह तुम ही में से एक गिरोह है।"

لَا تَحْسَبُوْهُ شَرًّا لَّكُمْ ۭ بَلْ هُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۭ

"उसे तुम अपने लिए बुरा ना समझो, बल्कि यह भी तुम्हारे लिए ख़ैर ही है।"

यह वाक़िया गोया अल्लाह तआला के बहुत से अहकाम और क़वानीन के नुज़ूल का ज़रिया बन गया है। इसकी वजह से उम्मत को शरीअत के अहम उमूर की तालीम दी जायेगी। इस वाक़िये का खुलासा यूँ है:

6 हिजरी में रसूल अल्लाह ﷺ ग़ज़वा-ए-बनी मुस्तलक़ के लिए तशरीफ़ ले गये। इस सफ़र में हज़रत आयशा रज़ि. आप ﷺ के हमराह थीं। आप एक अलग होदज (कुजावा) में सफ़र करती थीं। वापसी के सफ़र के दौरान एक जगह जब क़ाफ़िले का पड़ाव था आप सुबह मुँह अँधेरे क़ज़ा-ए-हाजत के लिए गयीं। वापिसी में आपका हार कहीं गिर गया और उसकी तलाश में आपको इतनी देर हो गई कि क़ाफ़िले के कूच का वक़्त हो गया। जिन लोगों को आपका होदज ऊँट पर बाँधने और उतारने की ज़िम्मेदारी तफ़वीज़ की गई थी उन्होंने होदज उठा कर ऊँट पर बाँध दिया। आप चूँकि बहुत दुबली-

पतली थीं और आप समेत होदज का वज़न बहुत ज़यादा नहीं होता था, इसलिए उठाते हुए वो लोग यह अंदाज़ा ना कर सके कि होदज खाली है और आप उसमें मौजूद नही हैं। बहरहाल जब आप पड़ाव की जगह पर वापस आईं तो क़ाफ़िला कूच कर चुका था। वापस आकर आपने सोचा होगा कि अगर पैदल क़ाफ़िले के पीछे जाने की कोशिश करूँगी तो ना जाने रात के अंधेरे में रास्ता भटक कर किस तरफ़ चली जाऊँ। इसलिए बेहतर है कि इसी जगह पर बैठी रहूँ, ता वक़्तिया लोगों को मेरे बारे में पता चले कि मैं होदज में नहीं हूँ और वो मुझे तलाश करते हुए वापस इस जगह पहुँच जायें। चुनाँचे आप वहीं बैठ गयीं। बैठे-बैठे आपको नींद आ गई और आप वहीं ज़मीन पर सो गयीं।

उस ज़माने में आमतौर पर सफ़र के दौरान एक शख़्स क़ाफ़िले के पीछे-पीछे सफ़र करता था ताकि बीमारी वग़ैरह की वजह से अगर कोई साथी पीछे रह गया हो तो उसकी मदद करे या क़ाफ़िले की कोई गिरी-पड़ी चीज़ उठा ले। इस सफ़र के दौरान इस ज़िम्मेदारी पर हज़रत सफ़वान बिन मौतल रज़ि. मामूर थे। वो उजाले के वक़्त क़ाफ़िले के पड़ाव की जगह पर पहुँचे तो दूर से उन्हें एक गढ़री सी पड़ी दिखाई दी। क़रीब आये तो उम्मुल मोमिनीन रज़ि. को ज़मीन पर पड़े पाया। नींद के दौरान आपका चेहरा खुल गया था और हिजाब का हुक्म नाज़िल होने से पहले चूँकि उन्होंने आपको देखा था इसलिए पहचान गये। (हिजाब का हुक्म सूरतुल अहज़ाब में है जो एक साल पहले 5 हिजरी में नाज़िल हो चुकी थी। इससे पहले ख़्वातीन हिजाब नहीं करती थीं) हज़रत सफ़वान ने आपको देख कर ऊँची आवाज़ में इन्नालिल्लाही व इन्ना इलैही रजिऊन पढ़ा। यह सुन कर आपकी आँख खुल गई। उन्होंने आपके सामने अपना ऊँट बैठा दिया। आप ख़ामोशी से सवार हो गयीं और वो नकेल पकड़े आगे-आगे चलते रहे। जब वो आपको लेकर क़ाफ़िले में पहुँचे तो अब्दुल्लाह बिन उबई ने अपने ख़ुबसे बातिन का इज़हार करते हुए शोर मचा दिया कि ख़ुदा की क़सम, तुम्हारे नबी की बीवी बच कर नहीं आई! (मआज़ अल्लाह) बाक़ी मुनाफ़िक़ीन ने भी उसकी हाँ में हाँ मिलाई और यूँ ये बे सर व पाया बात बढ़ते-बढ़ते एक तूफ़ान का रूप धार गई। मुनाफ़िक़ीन की इस साज़िश से बाज़ बहुत ही मुख़्लिस मुसलमान भी मुतास्सिर हो गये, जिनमें हज़रत हस्सान बिन साबित रज़ि. (दरबारे नबवी के शायर) भी थे। बाद में अल्लाह तआला ने हज़रत आयशा रज़ि. की बराअत में यह आयत नाज़िल फ़रमा कर आपकी पाकदामनी और पाकबाज़ी पर गवाही दी तो तब जाकर यह मामला ख़त्म हुआ। यह वाक़िया तारीख़-ए-इस्लाम में "वाक़िया-ए-इफ़्क" के नाम से मशहूर है।

لِكُلِّ امْرِیٍ مِّنْهُمْ مَّا اكْتَسَبَ مِنَ الْاِثْمِ ۚ

"उनमें से हर शख़्स के लिए वही है जो गुनाह उसने कमाया।"

जिस किसी का जितना हिस्सा इस तूफ़ान के उठाने में है उसको उसी क़द्र उसका बदला मिलेगा।

وَالَّذِيْ تَوَلّٰى كِبْرَهٗ مِنْهُمْ لَهٗ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ؁11

"और उनमें से जिसने इसका बड़ा बोझ अपने सिर लिया उसके लिए तो बहुत बड़ा अज़ाब है।"

इससे मुराद अब्दुल्ला बिन उबई है, जो इस बोहतान के बाँधने और उसकी तशहीर करने में पेश-पेश था।

आयत 12

لَوْلَآ اِذْ سَمِعْتُمُوْهُ ظَنَّ الْمُؤْمِنُوْنَ وَالْمُؤْمِنٰتُ بِاَنْفُسِهِمْ خَيْرًا ۙ

"ऐसा क्यों ना हुआ कि जब तुम लोगों ने यह बात सुनी तो मोमिन मर्द और मोमिन औरतें अपने बारे में अच्छा गुमान करते"

وَّقَالُوْا هٰذَآ اِفْكٌ مُّبِيْنٌ 12

"और कह देते कि यह तो एक खुला बोहतान है!"

आयत 13

لَوْلَا جَاۗءُوْ عَلَيْهِ بِاَرْبَعَةِ شُهَدَاۗءَ ۚ

"क्यों नहीं वो लेकर आये उस पर चार ग़वाह?"

فَاِذْ لَمْ يَاْتُوْا بِالشُّهَدَاۗءِ فَاُولٰۗىِٕكَ عِنْدَ اللّٰهِ هُمُ الْكٰذِبُوْنَ 13

"तो जब वो गवाह नहीं लाये तो अल्लाह के नज़दीक वही झूठे हैं।"

इस तरह के इल्ज़ाम के सबूत के लिए चार गवाह पेश करने का हुक्म इससे पहले सूरह अन्निसा आयत 15 में नाज़िल हो चुका था (सूरह अन्निसा 4 हिजरी में नाज़िल हो चुकी थी)। चुनाँचे उन लोगों के लिए लाज़मी था कि चार गवाह पेश करते वरना ख़ामोश रहते।

चार गवाहों की अदम मौजूदगी में इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ वो लोग झूठे हैं।

आयत 14

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ لَمَسَّكُمْ فِيْ مَآ اَفَضْتُمْ فِيْهِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ 14

"और अगर ना होता अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी रहमत तुम पर दुनिया और आखिरत में, तो ज़रूर तुम्हें पहुँचता बहुत बड़ा अज़ाब इस मामले के बाइस जिसका तुमने चर्चा किया था।"

आयत 15

اِذْ تَلَقَّوْنَهٗ بِاَلْسِنَتِكُمْ

"जब तुम ले रहे थे उसे अपनी ज़बानों से"

इधर से बात सुन कर उधर पहुँचा देना इंसानी कमज़ोरी है और इसी इंसानी कमज़ोरी की वजह से कोई भी हेजान अंगेज़ बात "मुँह से निकली कोठे चढ़ी" के मिस्दाक़ देखते ही देखते जंगल की आग की तरह फैल जाती है।

"और तुम अपने मुँहों से वो कुछ कह रहे थे जिसके बारे में तुम्हें कोई इल्म नहीं था"

وَتَـقُوْلُوْنَ بِاَفْوَاهِكُمْ مَّا لَيْسَ لَكُمْ بِهٖ عِلْمٌ

इस बारे में जितनी बातें थीं सब सुनी-सुनाई थीं, उनके पीछे ना कोई इल्मी सबूत था और ना कोई गवाह।

"और तुम इसे मामूली समझ रहे थे, जबकि अल्लाह के नज़दीक यह बहुत बड़ी बात थी।"

وَّتَحْسَبُوْنَهٗ هَيِّنًا ڰ وَّهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظِيْمٌ ؁15

किसी मुसलमान ख़ातून पर इस तरह की तोहमत लगा देना बहुत क़बीह हरकत है, "बाज़ी-बाज़ी बारीशे बाबा हम बाज़ी!" के मिस्दाक़ उम्मुल मोमिनीन रज़ि. ज़ौजा-ए-रसूल को ऐसी तोहमत का हदफ़ बना लिया जाये। अल्लाह के नज़दीक यह हरकत किस क़दर ना-पसंदीदा होगी!

आयत 16

"और ऐसा क्यों ना हुआ कि जब तुमने उसे सुना तो तुम कहते कि हमारे लिए जायज़ नहीं है कि हम ऐसी बात ज़बान पर लायें!"

وَلَوْلَآ اِذْ سَمِعْتُمُوْهُ قُلْتُمْ مَّا يَكُوْنُ لَنَآ اَنْ نَّتَكَلَّمَ بِهٰذَا ڰ

"(और कहते कि) ऐ अल्लाह! तू पाक है, यह तो एक बहुत बड़ा बोहतान है!"

سُبْحٰنَكَ هٰذَا بُهْتَانٌ عَظِيْمٌ ؁16

आयत 17

"अल्लाह तुम्हें नसीहत करता है कि तुम दोबारा कभी भी ऐसी कोई हरकत मत करना, अगर तुम मोमिन हो।"

يَعِظُكُمُ اللّٰهُ اَنْ تَعُوْدُوْا لِمِثْلِهٖٓ اَبَدًا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۚ17

आयत 18

"और अल्लाह तुम्हारे लिए अपनी आयात को वाज़ेह कर रहा है। अल्लाह सब कुछ जानने वाला, बहुत हिकमत वाला है।"

وَيُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيٰتِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ؁18

आयत 19

"बेशक जो लोग चाहते हैं कि अहले ईमान में बेहयाई का चर्चा हो, उनके लिए दुनिया और आख़िरत में दर्दनाक अज़ाब है।"

اِنَّ الَّذِيْنَ يُحِبُّوْنَ اَنْ تَشِيْعَ الْفَاحِشَةُ فِي الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۙ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۭ

यानि वो लोग जो मुख़्तलिफ़ हरबों से मआशरे में बेहयाई को आम करते हैं। आयत के अल्फ़ाज़ इशाअते फ़हश की तमाम सूरतों पर हावी हैं। आज-कल इसका बहुत बड़ा ज़रिया प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया है। कमर्शियल इश्तहारात में औरतों की नीम उरियाँ तसवीर दी जाती हैं। इसके अलावा बुराई की इशाअत यूँ भी हो रही हैं कि नाजायज़ ताल्लुक़ात के स्कैंडल्ज़ की तशहीर की जाती है और बग़ैर किसी माक़ूल और मुनासिब तहक़ीक़ के अख़बारात और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की करामत से उनकी ख़बरें दुनिया भर में घर-घर पहुँच जाती हैं। हत्ता कि छोटी उम्र के बच्चे और बच्चियाँ भी ऐसे बेहुदा स्कैंडल्ज़ को पढ़ते, सुनते और इस मौज़ू पर अपनी मालूमात में इज़ाफ़ा करते हैं। बहरहाल ऐसे वाक़िआत को ख़बर बना कर शाया कर देना बहुत बड़ा जुर्म है और जो लोग भी इसके ज़िम्मेदार हैं वो इस आयत के मिस्दाक़ हैं। शरीअत का हुक्म तो यह है कि अगर कहीं कोई गलती हुई भी है तो हत्ता अल वसीअ बुराई का चर्चा ना किया जाये। लेकिन अगर क़ानूनी तक़ाज़े पूरे होते हों तो मुजरिमों को कटहरे में ज़रूर लाया जाये और उन्हें ऐसी सज़ा दिलवाई जाये कि एक को सज़ा हो और हज़ारों के बाइसे इबरत हो।

وَاللّٰہُ یَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ۝19

"और अल्लाह ख़ूब जानता है और तुम नहीं जानते।"

आयत 20

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰہِ عَلَیْکُمْ وَرَحْمَتُهٗ وَاَنَّ اللّٰہَ رَءُوْفٌ رَّحِیْمٌ ۝20

"और अगर अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी रहमत तुम लोगों पर ना होती, और यह कि यक़ीनन अल्लाह बहुत मेहरबान, निहायत रहम करने वाला है।"

तो यह जो तूफ़ान उठाया गया था इसके नतीजे बहुत दूर तक जाते। (इस मफ़हूम के अल्फ़ाज़ यहाँ महज़ूफ़ हैं।)

आयात 21 से 26 तक

یٰٓاَیُّهَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّبِعُوْا خُطُوٰتِ الشَّیْطٰنِ ۭ وَمَنْ یَّتَّبِعْ خُطُوٰتِ الشَّیْطٰنِ فَاِنَّهٗ یَاْمُرُ بِالْفَحْشَاۗءِ وَالْمُنْكَرِ ۭ وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَیْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ مَا زَكٰي
مِنْكُمْ مِّنْ اَحَدٍ اَبَدًا ۙ وَّلٰكِنَّ اللّٰهَ یُزَكِّيْ مَنْ یَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ سَمِیْعٌ عَلِیْمٌ ۝21 وَلَا یَاْتَلِ اُولُوا الْفَضْلِ مِنْكُمْ وَالسَّعَةِ اَنْ یُّؤْتُوْٓا اُولِي الْقُرْبٰى وَالْمَسٰكِیْنَ
وَالْمُهٰجِرِیْنَ فِيْ سَبِیْلِ اللّٰهِ ڞ وَلْیَعْفُوْا وَلْیَصْفَحُوْا ۭ اَلَا تُحِبُّوْنَ اَنْ یَّغْفِرَ اللّٰهُ لَكُمْ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِیْمٌ ۝22 اِنَّ الَّذِیْنَ یَرْمُوْنَ الْمُحْصَنٰتِ الْغٰفِلٰتِ
الْمُؤْمِنٰتِ لُعِنُوْا فِي الدُّنْیَا وَالْاٰخِرَةِ ۠ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِیْمٌ ۝23ۙ یَّوْمَ تَشْهَدُ عَلَیْهِمْ اَلْسِنَتُهُمْ وَاَیْدِیْهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ بِمَا كَانُوْا یَعْمَلُوْنَ ۝24 یَوْمَىِٕذٍ یُّوَفِّیْهِمُ
اللّٰهُ دِیْنَهُمُ الْحَقَّ وَیَعْلَمُوْنَ اَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ الْمُبِیْنُ ۝25 اَلْخَبِیْثٰتُ لِلْخَبِیْثِیْنَ وَالْخَبِیْثُوْنَ لِلْخَبِیْثٰتِ ۚ وَالطَّیِّبٰتُ لِلطَّیِّبِیْنَ وَالطَّیِّبُوْنَ لِلطَّیِّبٰتِ ۚ
اُولٰۗىِٕكَ مُبَرَّءُوْنَ مِمَّا یَقُوْلُوْنَ ۭ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِیْمٌ ۝26

आयत 21

یٰٓاَیُّهَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّبِعُوْا خُطُوٰتِ الشَّیْطٰنِ ۭ

"ऐ अहले ईमान! शैतान के नक़्शे क़दम की पैरवी ना करो।"

وَمَنْ يَّتَّبِعْ خُطُوٰتِ الشَّيْطٰنِ فَاِنَّهٗ يَاْمُرُ بِالْفَحْشَاۗءِ وَالْمُنْكَرِ ۭ

“और जो कोई शैतान के नक़्शे क़दम की पैरवी करेगा तो शैतान तो उसे बेहयाई और बुराई ही का हुक्म देगा।”

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ مَا زَكٰي مِنْكُمْ مِّنْ اَحَدٍ اَبَدًا ۙ

“और अगर अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी रहमत तुम्हारे शामिल हाल ना होती तो तुम में से कोई एक भी कभी पाक ना हो सकता”

यह अल्लाह तआला का ख़ास फ़ज़ल और उसकी रहमत है कि वो तुम लोगों के बुराईयों की सतरपोशी करता रहता है और इस तरह तुम्हारे राहे रास्त पर आने के इम्कानात मौजूद रहते हैं। क्योंकि अगर इंसान की बुराई का पर्दा एक दफ़ा चाक हो जाये तो वो ढीठ बन जाता है और उसमें इस्लाह की गुँजाईश नहीं रहती। चुनाँचे यह अल्लाह की मेहरबानी है कि वो गुनाह और मअसियत का इरतकाब करने वालों की फ़ौरी पकड़ नहीं करता और इस तरह उनके लिए इस्लाह और तौबा का दरवाज़ा खुला रहता है।

وَّلٰكِنَّ اللّٰهَ يُزَكِّيْ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ   21

“लेकिन अल्लाह जिसको चाहता है पाक करता है। और अल्लाह सब कुछ सुनने वाला, हर चीज़ का इल्म रखने वाला है।”

आयत 22

وَلَا يَاْتَلِ اُولُوا الْفَضْلِ مِنْكُمْ وَالسَّعَةِ

“और क़सम ना खा लें तुम में से फ़ज़ीलत और कुशादगी वाले लोग”

اَنْ يُّؤْتُوْٓا اُولِي الْقُرْبٰى وَالْمَسٰكِيْنَ وَالْمُهٰجِرِيْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ڝ

“इस पर कि वो (अपने अमवाल में से) दें, क़राबतदारों को, मसाकीन को और मुहाजरीन को अल्लाह की राह में”

यहाँ फ़ज़ीलत और कुशादगी के रुहानी और माद्दी दोनों पहलु मुराद हैं, यानि वो लोग जिन्हें अल्लाह तआला ने ईमान, नेकी और माल व दौलत में फ़ज़ीलत दे रखी है। इस आयत में इशारा हज़रत अबुबक्र सिद्दीक़ रज़ि. की तरफ़ है। बदक़िस्मती से आपके एक क़रीबी अज़ीज़ मुस्तह बिन उसासाह भी मज़कूरा बोहतान की मुहिम में शरीक हो गये थे। वो इन्तहाई ग़रीब और नादार थे। आप उनके ख़ानदान की कफ़ालत करते और हर तरह से उनकी ज़रूरियात का ख़्याल रखते थे। हज़रत अबुबक्र सिद्दीक़ रज़ि. उनके इस रवैय्ये से बहुत रंजीदा हुए कि उस शख़्स ने ना रिश्तेदारी का लिहाज़ किया, ना मेरे अहसानात को मद्देनज़र रखा और बग़ैर सोचे-समझे मेरी बेटी पर बोहतान लगाने वालों के साथ शरीक हो गया। चुनाँचे आपने गुस्से में आकर क़सम खा ली कि आइंदा मैं इस शख़्स की बिल्कुल कोई मदद नहीं करूँगा। अल्लाह तआला ने आपकी इस क़सम पर गिरफ्त फ़रमाई कि उस शख़्स से जो गलती हुई सो हुई, लेकिन आप तो भलाई और अहसान की रविश तर्क

करने की क़सम मत खायें! यह रवैय्या किसी तरह भी आपकी फ़ज़ीलत व मर्तबत के शायाने शान नहीं।

وَلْيَعْفُوْا وَلْيَصْفَحُوْا ۭ

"और चाहिए कि वो माफ़ कर दें और दरगुज़र से काम लें।"

اَلَا تُحِبُّوْنَ اَنْ يَّغْفِرَ اللّٰهُ لَكُمْ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ 22

"क्या तुम नहीं चाहते कि अल्लाह तुम्हें माफ़ करे? और अल्लाह बहुत बख्शने वाला, निहायत मेहरबान है।"

ख़ता तो किसी भी शख़्स से हो सकती है। तुम सब लोग ख़तायें करते हो और अल्लाह तुम्हारी ख़ताओं को माफ़ करता रहता है। अगर तुम लोग अपने लिए यह पसंद करते हो कि अल्लाह तुम्हारी ख़तायें माफ़ कर दे तो फिर तुम्हें भी चहिए कि तुम दूसरों की ख़ताओं को माफ़ कर दिया करो। रिवायात में आता है कि यह आयत सुनते ही हज़रत अबु बक्र सिद्दीक़ रज़ि. ने बे-साख़्ता कहा: بَلٰى وَاللّٰهِ اِنَّا نُحِبُّ اَنْ تَغْفِرَلَنَا يَارَبَّنَا "क्यों नहीं! अल्लाह की क़सम, ऐ हमारे परवरदिगार! हम ज़रूर यह पसंद करते हैं कि तू हमें माफ़ कर दे।" चुनाँचे उन्होंने फ़ौरी तौर पर अपनी क़सम का कफ्फ़ारा अदा किया और हज़रत मुस्तह रज़ि. से पहले की तरह भलाई और अहसान का रवैय्या इख़्तियार करने लगे।

आयत 23

اِنَّ الَّذِيْنَ يَرْمُوْنَ الْمُحْصَنٰتِ الْغٰفِلٰتِ الْمُؤْمِنٰتِ لُعِنُوْا فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۠ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۙ 23

"यक़ीनन वो लोग जो तोहमत लगाते हैं पाक दामन बेख़बर मोमिनात पर, उन पर फटकार है दुनिया में भी और आख़िरत में भी, और उनके लिए बहुत बड़ा अज़ाब है।"

"गाफ़िलात" से मुराद ऐसी सीधी-साधी, भोली-भाली, मासूम औरतें हैं जिनके दिल पाक हैं, जो इन मामलात से बिल्कुल बेख़बर हैं कि बद्चलनी क्या होती है। ऐसी बातें उनके वहम व गुमान में भी नहीं होतीं।

आयत 24

يَّوْمَ تَشْهَدُ عَلَيْهِمْ اَلْسِنَتُهُمْ وَاَيْدِيْهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ 24

"जिस दिन उनके ख़िलाफ़ ग़वाही देंगी उनकी ज़बानें, उनके हाथ और उनके पाँव, उस बारे में कि जो अमल वो करते रहे थे।"

शहिदा के बाद जब अला आता है तो यह किसी के ख़िलाफ़ शहादत देने का मफ़हूम देता है। अल्लाह तआला के इस फ़रमान के हवाले से यह बात अच्छी तरह ज़हन नशीन कर लें कि इंसान का जिस्म और उसके तमाम आज़ा अल्लाह तआला की अमानत हैं। अगर वो अपने किसी अज़ु को अल्लाह की नाफ़रमानी या गुनाह के किसी काम में इस्तेमाल करता है तो वो अज़ु अपनी जगह अहतेजाज तो करता है मगर इंसान की हुक्म अदूली नहीं करता, क्योंकि अल्लाह तआला ने इंसान के तमाम आज़ा को उसके

ताबेअ कर रखा है। लेकिन क़यामत के दिन यह आज़ा इस तरह इंसान के ताबेअ नहीं रहेंगे और अल्लाह तआला के हुक्म से उसके खिलाफ़ ग़वाह बन कर उसके गुनाहों को एक-एक तफ़सील के बारे में बतायेंगे।

आयत 25

يَوْمَئِذٍ يُّوَفِّيْهِمُ اللّٰهُ دِيْنَهُمُ الْحَقَّ

"जिस दिन अल्लाह उन लोगों को पूरा-पूरा देगा उनका वाक़ई बदला"

यहाँ पर लफ़्ज "दीन" बदले के मायने में आया है, जैसे सूरतुल फ़ातिहा में "यौमुद्दीन" के मायने हैं "बदले का दिन।"

وَيَعْلَمُوْنَ اَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ الْمُبِيْنُ ؁25

"और वो जान लेंगे कि अल्लाह ही हक़ है, खोल कर बयान करने वाला।"

आयत 26

اَلْخَبِيْثٰتُ لِلْخَبِيْثِيْنَ وَالْخَبِيْثُوْنَ لِلْخَبِيْثٰتِ ۚ

"नापाक औरतें नापाक मर्दों के लिए हैं और नापाक मर्द नापाक औरतों के लिए"

وَالطَّيِّبٰتُ لِلطَّيِّبِيْنَ وَالطَّيِّبُوْنَ لِلطَّيِّبٰتِ ۚ

"और पाकबाज़ औरतें पाकबाज़ मर्दों के लिए हैं और पाकबाज़ मर्द पाकबाज़ औरतों के लिए।"

اُولٰۗىِٕكَ مُبَرَّءُوْنَ مِمَّا يَقُوْلُوْنَ ۭ

"यह लोग बरी हैं उन बातों से जो लोग कहते हैं।"

لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِيْمٌ ؀26

"उनके लिए मग़फ़िरत है और रिज़्क़े करीम है।"

यह एक उसूली बात फ़रमाई गई कि नापाक और बद-किरदार मर्द व ज़न एक दूसरे के लिए कशिश रखते हैं और पाकबाज़ मर्द व ज़न एक दूसरे से तबई मुनासबत रखते हैं। इसकी नौईयत भी दर हक़ीक़त एक अख्लाक़ी तालीम की है, जैसा कि क़ब्ल अज़ें आयत 3 में भी अख्लाक़ी तालीम दी गई थी कि ज़ानी मर्द सिर्फ़ ज़ानिया या मुशरिका से ही निकाह करे और इसी तरह एक ज़ानिया भी सिर्फ़ किसी ज़ानी या मुशरिक से ही निकाह करे। दरअसल इन हिदायात से मुराद और मदआ यह है कि इस्लामी मआशरे का मज्मुई मिज़ाज इस क़द्र पाकीज़ा हो, उसकी अख्लाक़ी हिस्स इतनी जानदार हो और उसकी अख्लाक़ी इक़दार इस हद तक इस्तवार हो कि किसी भी गलतकार फ़र्द के लिए, चाहे वो मर्द हो या औरत, मुस्लिम मआशरे में कोई

जगह ना हो। ऐसा फ़र्द खुद अपनी नज़रों में ज़लील होकर मआशरे से मुकम्मल तौर पर कट कर रह जाये।

आयात 27 से 34 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَدْخُلُوْا بُيُوْتًا غَيْرَ بُيُوْتِكُمْ حَتّٰى تَسْتَاْنِسُوْا وَتُسَلِّمُوْا عَلٰٓي اَهْلِهَا ۭ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ ۝27 فَاِنْ لَّمْ تَجِدُوْا فِيْهَآ اَحَدًا
فَلَا تَدْخُلُوْهَا حَتّٰى يُؤْذَنَ لَكُمْ ۚ وَاِنْ قِيْلَ لَكُمُ ارْجِعُوْا فَارْجِعُوْا هُوَ اَزْكٰى لَكُمْ ۭ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ عَلِيْمٌ ۝28 لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَدْخُلُوْا بُيُوْتًا غَيْرَ
مَسْكُوْنَةٍ فِيْهَا مَتَاعٌ لَّكُمْ ۭ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تُبْدُوْنَ وَمَا تَكْتُمُوْنَ ۝29 قُلْ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ يَغُضُّوْا مِنْ اَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوْا فُرُوْجَهُمْ ۭ ذٰلِكَ اَزْكٰى لَهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ
خَبِيْرٌۢ بِمَا يَصْنَعُوْنَ ۝30 وَقُلْ لِّلْمُؤْمِنٰتِ يَغْضُضْنَ مِنْ اَبْصَارِهِنَّ وَيَحْفَظْنَ فُرُوْجَهُنَّ وَلَا يُبْدِيْنَ زِيْنَتَهُنَّ اِلَّا مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَلْيَضْرِبْنَ بِخُمُرِهِنَّ عَلٰي
جُيُوْبِهِنَّ ۠ وَلَا يُبْدِيْنَ زِيْنَتَهُنَّ اِلَّا لِبُعُوْلَتِهِنَّ اَوْ اٰبَاۗىِٕهِنَّ اَوْ اٰبَاۗءِ بُعُوْلَتِهِنَّ اَوْ اَبْنَاۗىِٕهِنَّ اَوْ اَبْنَاۗءِ بُعُوْلَتِهِنَّ اَوْ اِخْوَانِهِنَّ اَوْ بَنِيْٓ اِخْوَانِهِنَّ اَوْ بَنِيْٓ اَخَوٰتِهِنَّ اَوْ
نِسَاۗىِٕهِنَّ اَوْ مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُهُنَّ اَوِ التّٰبِعِيْنَ غَيْرِ اُولِي الْاِرْبَةِ مِنَ الرِّجَالِ اَوِ الطِّفْلِ الَّذِيْنَ لَمْ يَظْهَرُوْا عَلٰي عَوْرٰتِ النِّسَاۗءِ ۠ وَلَا يَضْرِبْنَ بِاَرْجُلِهِنَّ لِيُعْلَمَ
مَا يُخْفِيْنَ مِنْ زِيْنَتِهِنَّ ۭ وَتُوْبُوْٓا اِلَى اللّٰهِ جَمِيْعًا اَيُّهَ الْمُؤْمِنُوْنَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝31 وَاَنْكِحُوا الْاَيَامٰى مِنْكُمْ وَالصّٰلِحِيْنَ مِنْ عِبَادِكُمْ وَاِمَاۗىِٕكُمْ ۭ اِنْ يَّكُوْنُوْا
فُقَرَاۗءَ يُغْنِهِمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۭ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝32 وَلْيَسْتَعْفِفِ الَّذِيْنَ لَا يَجِدُوْنَ نِكَاحًا حَتّٰى يُغْنِيَهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۭ وَالَّذِيْنَ يَبْتَغُوْنَ الْكِتٰبَ مِمَّا
مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ فَكَاتِبُوْهُمْ اِنْ عَلِمْتُمْ فِيْهِمْ خَيْرًا ڰ وَّاٰتُوْهُمْ مِّنْ مَّالِ اللّٰهِ الَّذِيْٓ اٰتٰىكُمْ ۭ وَلَا تُكْرِهُوْا فَتَيٰتِكُمْ عَلَي الْبِغَاۗءِ اِنْ اَرَدْنَ تَحَصُّنًا لِّتَبْتَغُوْا عَرَضَ
الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۭ وَمَنْ يُّكْرِهْهُّنَّ فَاِنَّ اللّٰهَ مِنْۢ بَعْدِ اِكْرَاهِهِنَّ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝33 وَلَقَدْ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكُمْ اٰيٰتٍ مُّبَيِّنٰتٍ وَّ مَثَلًا مِّنَ الَّذِيْنَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ
وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِيْنَ ۝34

इन आयात में मुतअद्दिद ऐसे मआशरती अहकाम दिए गये हैं जो एक साफ़-सुथरा इंसानी मआशरा क़ायम करने के लिए बुनियाद फ़राहम करते हैं, जिसमें फ़हाशी और बेहयाई के लिए जगह पाने का दूर-दूर तक कोई इम्कान ना हो। इस सिलसिले में सूरह बनी इस्राईल का यह हुक्म बड़ा जामेअ और बहुत बुनियादी नौइयत का है: {وَلَا تَقْرَبُوا الزِّنٰٓى اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً ۭ وَسَاۗءَ سَبِيْلًا} (आयत 32) "तुम ज़िना के क़रीब भी मत फटको, यह खुली बेहयाई है और बहुत ही बुरा रास्ता है।" इससे इस्लाम का मदआ व मन्शा वाज़ेह होता है कि वो इंसानी मआशरे में हर उस फ़अल और तरीक़े का सद्देबाब करना चाहता है जो फ़वाहिश के ज़ुमरे में आता है।

इस सिलसिले में इस्लामी नुक़्ते नज़र को अच्छी तरह समझने की ज़रूरत है। अल्लाह तआला ने इंसान को दो अलग-अलग जिन्सों यानि औरत और मर्द की सूरत में पैदा करके एक हिकमत और मक़सद के तहत उनमें से हर एक के लिए अपनी मुख़ालिफ़ जिन्स में बेपनाह कशिश रखी है। यह कशिश यानि जिन्सी ख़्वाहिश एक ऐसा मुँह ज़ोर घोड़ा है जिसे हर वक़्त लग़ाम देकर क़ाबू में रखने की ज़रूरत है। चुनाँचे इस्लाम ने हर ऐसा इक़दाम किया है जो इंसान के जिन्सी जज़्बे को एक खास डिस्पिलीन का पाबंद रखने में मआवन हो और हर वो रास्ता बंद करना ज़रूरी समझा है जिस पर चल कर इंसान के लिए जिन्सी बे-राहरवी की तरफ़ माइल होने का ज़रा सा भी अहतमाल हो। यही फ़िक्र व फ़लसफ़ा इस्लाम के मआशरती निज़ाम का बुनियादी सतून है और इस सतून को मज़बूत बुनियादों पर इस्तवार करने के लिए क़ुरान में ऐसे जामेअ और दोर्रस क़िस्म के अहकाम जारी किए गये हैं जो ऐसे मामलात से मुताल्लिक़ छोटी-छोटी जुज़इयात तक का अहाता किये नज़र आते हैं। उनमें घर की चार दीवारी का तक़द्दुस, शख्सी तख्लिये (privacy) का तहफ़्फ़ुज़, सतर का इल्तज़ाम, पर्दे का अहतमाम, गज़्ज़े बसर से मुताल्लिक़ हिदायात, मख़्लूत महाफ़ल व मवाक़े की हौसला शिकनी जैसे अहकाम व अक़्दामात शामिल हैं।

आयत 27

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَدْخُلُوْا بُيُوْتًا غَيْرَ بُيُوْتِكُمْ حَتّٰى تَسْتَاْنِسُوْا وَتُسَلِّمُوْا عَلٰٓي اَهْلِهَا ۭ

"ऐ ईमान वालो! अपने घरों के आलावा दूसरे घरों में दाख़िल ना हुआ करो, हत्ता कि

उनकी रज़ा मालूम कर लो और घरवालों को सलाम कर लो!"

घर की चार दीवारी के तक़द्दुस और उसके मकीनों के तख्लिये (privacy) के आदाब को मल्हूज़ रखने के लिए यह ताकीदी हुक्म है, यानि किसी को किसी दूसरे के घर में उसकी रज़ामंदी और इजाज़त के बग़ैर दाखिल होने की इजाज़त नहीं है। इस सिलसिले में इजाज़त लेने और रज़ामंदी मालूम करने का तरीक़ा यह है कि मुलाक़ात के लिए आने वाला शख़्स दरवाज़े के बाहर से ऊँची आवाज़ में "अस्सलामु अलैकुम" कहे और पूछने पर अपनी पहचान कराये ताकि अहले ख़ाना उसे अंदर आने की इजाज़त देने या ना देने के बारे में फ़ैसला कर सकें। ऐसा हरग़िज़ ना हो कि कोई किसी के घर में बेधड़क चला आये।

ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ ؁27

"यह तुम्हारे लिए बेहतर है ताकि तुम नसीहत हासिल करो।"

आयत 28

فَاِنْ لَّمْ تَجِدُوْا فِيْهَآ اَحَدًا فَلَا تَدْخُلُوْهَا حَتّٰى يُؤْذَنَ لَكُمْ ۚ

"फिर अगर तुम उस घर में किसी को मौजूद ना पाओ तो उसमें दाख़िल ना हो यहाँ तक कि तुम्हें इजाज़त दे दी जाये"

गोया खाली घर में भी उसके मालिक की इजाज़त के बगैर दाख़िल होने की इजाज़त नहीं है।

وَاِنْ قِيْلَ لَكُمُ ارْجِعُوْا فَارْجِعُوْا هُوَ اَزْكٰى لَكُمْ

"और अगर तुमसे कहा जाये कि लौट जाओ तो तुम लौट जाया करो, यह तरीक़ा तुम्हारे लिए बहुत पाकीज़ा है।"

وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ عَلِيْمٌ ؁28

"और जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उससे ख़ूब वाक़िफ़ है।"

आप किसी से मुलाक़ात का वक़्त तय किए बगैर उसके घर पहुँच गये हैं और समझते हैं कि आपको वक़्त देना उसका फ़र्ज़ है, हालाँकि मुम्किन है उस वक़्त वो साहब आराम कर रहे हों, किसी दूसरे काम में मसरूफ़ हों या किसी मजबूरी के बाइस आपसे मुलाक़ात करने से माज़ूर हों। चुनाँचे अगर अंदर से इत्तला दी जाये कि साहिबे ख़ाना के लिए इस वक़्त आपसे मुलाक़ात करना मुम्किन नहीं और यह कि आप फिर किसी वक़्त तशरीफ़ लायें तो ऐसी सूरत में आप बग़ैर बुरा माने वापस चले जायें। आपको ऐसे रिमार्क्स देने का कोई हक़ नहीं पहुँचता कि बहुत मुतकब्बिर शख़्स है, मैं उससे मिलने गया तो उसने मुलाक़ात से ही इंकार कर दिया। अलबत्ता ऐसी किसी भी सूरतेहाल से बचने के लिए बेहतर है कि आप पेशगी इत्तला देकर और वक़्ते मुलाक़ात तय करके किसी से मिलने के लिए जायें।

आयत 29

لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَدْخُلُوْا بُيُوْتًا غَيْرَ مَسْكُوْنَةٍ فِيْهَا مَتَاعٌ لَّكُمْ ۭ

"इसमें तुम्हारे लिए कोई हर्ज़ नहीं कि तुम ग़ैर रिहायशी घरों में (बग़ैर इजाज़त) चले जाओ, जिनमें तुम्हारे लिए कुछ सामान हो।"

इससे मुराद दुकानें, स्टोर और गोदाम वग़ैरह हैं।

وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تُبْدُوْنَ وَمَا تَكْتُمُوْنَ ؀29

"और अल्लाह ख़ूब जानता है जो कुछ तुम ज़ाहिर करते हो और जो कुछ तुम छुपाते हो।"

क़ानून की असल रूह को समझना और उसके मुताबिक़ उस पर अमल करना ज़रूरी है। दरअसल घर में बिला इजाज़त दाख़िल होने से मना करने का मक़सद घर में सुकूनत पज़ीर ख़ानदान की privacy के तक़द्दुस को यक़ीनी बनाना है। लिहाज़ा किसी दुकान या गोदाम पर इस क़ानून के इतलाक़ का कोई जवाज़ नहीं है कि आदमी दुकान के दरवाज़े पर इसलिए खड़ा रहे कि जब तक मालिक मुझे इजाज़त नहीं देगा मैं अंदर नहीं जाऊँगा।

आयत 30

قُلْ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ يَغُضُّوْا مِنْ اَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوْا فُرُوْجَهُمْ ۭ

"(ऐ नबी ﷺ!) मोमिनीन से कहिये कि वो अपनी निगाहें नीची रखा करें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें।"

ذٰلِكَ اَزْكٰى لَهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا يَصْنَعُوْنَ ؀30

"यह उनके लिए ज़्यादा पाकीज़ा है। यक़ीनन अल्लाह बाख़बर है उससे जो कुछ वो करते हैं।"

आयत 31

وَقُلْ لِّلْمُؤْمِنٰتِ يَغْضُضْنَ مِنْ اَبْصَارِهِنَّ وَيَحْفَظْنَ فُرُوْجَهُنَّ

"और मोमिन औरतों से भी कह दीजिए कि वो अपनी निगाहें नीची रखा करें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें"

وَلَا يُبْدِيْنَ زِيْنَتَهُنَّ اِلَّا مَا ظَهَرَ مِنْهَا

"और वो अपनी ज़ीनत का इज़हार ना करें, सिवाय उसके जो उसमें से अज़ख़ुद ज़ाहिर हो जाये।"

وَلْيَضْرِبْنَ بِخُمُرِهِنَّ عَلٰي جُيُوْبِهِنَّ ۠

"और चाहिए कि वो अपने गिरेबानों पर अपनी ओढ़नियों के बुक्कल मार लिया करें"

अपने मामूल के लिबास के ऊपर वो अपनी ओढ़नियों को इस तरह लपेटे रखें कि उनके गिरेबान और सीने ढ़के रहें। ख़ुमुर जमा है, इसका वाहिद ख़िमार है और इसके मायने ओढ़नी (दुपट्टे) के हैं। सूरतुल अहज़ाब, आयत 59 में ख्वातीन के लिबास के हवाले से जलाबीब का लफ़्ज़ आया है जिसकी वाहिद जिल्बाब है। हमारे यहाँ "जिल्बाब" का मुतरादिफ़ लफ़्ज़ चादर है। चुनाँचे यूँ समझिये कि दुपट्टा और चादर दोनों ही औरत के लिबास का लाज़िमी हिस्सा हैं। अरब तमद्दुन में इस्लाम से पहले अग़रचे औरत के लिए चेहरे का पर्दा रायज नहीं था मगर चादर और ओढ़नी उस दौर में भी औरत के लिबास का लाज़िमी हिस्सा थीं। ओढ़नी वो हर वक़्त ओढ़े रहती थी (घर के अंदर रहते हुए भी) जबकि घर से बाहर निकलना होता तो चादर ओढ़ कर निकलती थी। अलबत्ता वो ओढ़नी इस अंदाज़ से लेती थीं कि गिरेबान का एक हिस्सा खुला रहता था जिससे गला और सीना साफ़ नुमाया होता था। इस आयत में हुक्म दिया गया कि अपने गिरेबानों पर अपनी ओढ़नियों के बुक्कल मार लिया करें ताकि उनके गिरेबान और सीने अच्छी तरह ढ़के रहें। ज़माना क़ब्ल अज़ इस्लाम में अरबों के यहाँ चादर ना सिर्फ़ औरतों बल्कि मर्दों के लिबास का भी लाज़िमी हिस्सा थी। चादर मर्द की इज़्ज़त की अलामत समझी जाती और चादर के मैयार से किसी शख़्स के मक़ाम व मर्तबे का तअय्युन भी होता था। मामुली चादर वाले शख़्स को एक आम आदमी जबकि क़ीमती दोशाला ओढ़ने वाले को मोअज़्ज़ और अहम आदमी समझा जाता था। इस तरह किसी के कंधे से उसकी चादर का खींचना या घसीटना उसको बेइज़्ज़त व बेतौक़ीर करने की अलामत थी। चादर का यही तसव्वुर उस हदीस क़ुदसी में भी मिलता है जिसमें हुज़ूर □ ने फ़रमाया कि अल्लाह फ़रमाता है: ((اَلْكِبْرِيَاءُ رِدَائِىْ))[12] "तकब्बुर मेरी चादर है।" यानि जो शख़्स तकब्बुर करता है वो गोया मेरी चादर घसीट रहा है।

وَلَا يُبْدِيْنَ زِيْنَتَهُنَّ

"और वो ना ज़ाहिर करें अपनी ज़ीनत को"

आगे इस हुक्म से इस्तसना के तौर पर मर्दों की एक तवील फ़ेहरिस्त दी जा रही है जिनके सामने और बग़ैर हिजाब, खुले चेहरे के साथ आ सकती है। मक़ामे ग़ौर है कि अगर औरत के चेहरे का पर्दा लाज़िमी नहीं है तो महरम मर्दों की यह तवील फ़ेहरिस्त बयान फ़रमाना (मआज़ अल्लाह!) क्या एक बे-मक़सद मश्क़ (exercise in futility) है। इससे साबित होता है कि इस्लामी शरीअत में औरत के चेहरे का पर्दा लाज़मी है और इस हुक्म से जिन मर्दों को इस्तसना हासिल है वो यह हैं:

اِلَّا لِبُعُوْلَتِهِنَّ اَوْ اٰبَآىِٕهِنَّ

"(वो अपनी ज़ीनत ज़ाहिर ना करें किसी पर) सिवाय अपने शौहरों के या अपने बापों के"

बाप के मफ़हूम में चचा, मामू, दादा और नाना भी शामिल हैं।

اَوْ اٰبَآءِ بُعُوْلَتِهِنَّ اَوْ اَبْنَآىِٕهِنَّ اَوْ اَبْنَآءِ بُعُوْلَتِهِنَّ

"या अपने शौहरों के बापों के, या अपने बेटों के, या अपने शौहरों के बेटों के"

यानि शौहर का वो बेटा जो उसकी दूसरी बीवी से है वह भी ना महरम नहीं है।

اَوْ اِخْوَانِہِنَّ اَوْ بَنِیْٓ اِخْوَانِہِنَّ اَوْ بَنِیْٓ اَخَوٰتِہِنَّ

"या अपने भाइयों के, या अपने भाइयों के बेटों (भतीजों) के, या अपनी बहनों के बेटों (भाँजों) के"

اَوْ نِسَاۗىِٕہِنَّ

"या अपनी जान-पहचान की औरतों के"

यानि आम औरतें भी ना-महरम तसव्वुर की जाएँगी। अलबत्ता अपने मेल-जोल और जान-पहचान की औरतें इस इस्तस्नाई फ़ेहरिस्त में शामिल हैं।

اَوْ مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُہُنَّ

"या उनके जिनके मालिक हैं उनके दाहिने हाथ"

यानि गुलाम और लौंडियाँ। लेकिन अक्सर अहले सुन्नत उल्मा के नज़दीक यह हुक्म सिर्फ़ लौंडियों के लिये है और गुलाम इसमें शामिल नहीं हैं।

اَوِ التّٰبِعِيْنَ غَيْرِ اُولِي الْاِرْبَةِ مِنَ الرِّجَالِ

"या ऐसे ज़ेरेदस्त मर्दों के जो इस तरह की ग़र्ज़ नहीं रखते"

यानि ऐसे ज़ेरेदस्त लोग जो सिर्फ़ ख़िदमतगार हों और अपनी उम्र या ज़ेरेदस्ती व महकूमी की बिना पर ख़्वातीन ख़ाना के मुताल्लिक़ कोई बुरी नीयत दिल में ना ला सकें। इस शर्त पर पूरा उतरने वाले मर्द भी इस इस्तस्नाई फ़ेहरिस्त में शुमार होंगे। मसलन ऐसे ख़ानदानी मुलाज़मीन जो कई पुश्तों से घरेलू ख़िदमत पर मामूर हों। पहले बाप मुलाज़िम था, फिर उसका बेटा भी उसी घर में पला-बढ़ा और बचपन से ही घर की ख़्वातीन की ख़िदमत में रहा। ऐसे लड़के या मर्द से यह अंदेशा नहीं होता कि वो घर की ख़्वातीन के बारे में बुरा ख़्याल ज़हन में लाये।

اَوِ الطِّفْلِ الَّذِيْنَ لَمْ يَظْهَرُوْا عَلٰي عَوْرٰتِ النِّسَاۗءِ ۠

"या उन लड़कों के जो औरतों के मख़्फ़ी मामलात से अभी नावाक़िफ़ हैं"

यानि वो नाबालिग़ लड़के जिनमें औरतों के लिए फ़ितरी रग़बत अभी पैदा नहीं हुई। यह उन महरमों लोगों की फ़ेहरिस्त है जिनके सामने औरत बग़ैर हिजाब के आ सकती है। इस ज़िमन में दो बातें मज़ीद ज़हन नशीन कर लीजिए:

पहली यह कि इस आयत में اِلَّا مَا ظَهَرَ مِنْهَا (सिवाय उसके जो उसमें से अज़ खुद ज़ाहिर हो जाये) के अल्फ़ाज़ से बाज़ लोग चेहरा मुराद लेते हैं, जो बाल-बदाहत बिल्कुल ग़लत है। सूरतुल अहज़ाब में वारिद अहकामे हिजाब और अहादीसे नबवी के रू से औरत के लिए चेहरे का पर्दा लाज़िमी है। अहदे नबवी में हुक्म हिजाब आ जाने के बाद औरतें खुले मुँह नहीं फिरती थीं। मेरे नज़दीक इन क़ुरानी अल्फ़ाज़ से मुराद निस्वानी जिस्म की साख़्त या उसकी ऐसी कोई कैफ़ियत है जिसे औरत छुपाना चाहे भी तो नहीं छुपा सकती। मसलन किसी ख़ातून ने बुर्क़ा पहन रखा है, चेहरे के पर्दे का अहतमाम भी किया है मगर उसके लंबे क़द की कशिश या मुतनासिब जिस्म की ख़ूबसूरती इस सब कुछ के बावजूद भी अपनी जगह मौजूद है, जो बहरहाल छुपाए नहीं छुप सकती।

दूसरी अहम बात यह है कि मज़कूरा महरमों के सामने औरत को सिर्फ़ चेहरे के पर्दे के बग़ैर आने की इजाज़त है। सतर के किसी हिस्से को उनके सामने भी खोलने की उसे इजाज़त नहीं (इसमें सिर्फ़ उसके खाविंद को इस्तसना हासिल है)। वाज़ेह रहे कि औरत के चेहरे, पंजों से नीचे हाथों और टख़नों से नीचे पैरों के सिवा उसका तमाम जिस्म उसके सतर में शामिल है। चुनाँचे किसी औरत को खुले बालों के साथ या मज़कूरा तीन आज़ा के अलावा जिस्म के किसी हिस्से को खुला छोड़ कर अपने वालिद, भाई या बेटे के सामने भी आने की इजाज़त नहीं।

وَلَا يَضْرِبْنَ بِاَرْجُلِهِنَّ لِيُعْلَمَ مَا يُخْفِيْنَ مِنْ زِيْنَتِهِنَّ ۭ

"और वो अपने पाँव ज़मीन पर मार कर ना चलें कि उनकी उस ज़ीनत में से कुछ ज़ाहिर हो जाये जिसे वो छुपाती हैं।"

औरत की चाल ऐसी ना हो जिसकी वजह से चादर या बुरक़े के बावजूद उसके बनाव सिंघार, ज़ेवरात वग़ैरह मे से किसी क़िस्म की ज़ीनत के इज़हार का इम्कान हो।

وَتُوْبُوْٓا اِلَى اللّٰهِ جَمِيْعًا اَيُّهَ الْمُؤْمِنُوْنَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ؀31

"और ऐ अहले ईमान! तुम सबके सब मिल कर अल्लाह की जनाब में तौबा करो ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

आयत 32

وَاَنْكِحُوا الْاَيَامٰى مِنْكُمْ

"और निकाह कर दिया करो बेवाओं का अपने में से"

यह बहुत अहम है। ख़ुसूसी तौर पर हमारे इस मआशरे के लिए इसमें बहुत बड़ी रहनुमाई है जहाँ हिन्दुआना रस्मो-रिवाज के असरात के बाइस बेवा का निकाह करना माअयूब व नापसंदीदा समझा जाता है और उसके साथ ख़ुशी से कोई शख़्स भी निकाह नहीं करना चाहता।

وَالصّٰلِحِيْنَ مِنْ عِبَادِكُمْ وَاِمَاۗىِٕكُمْ ۭ

"और तुम्हारे गुलामों और बांदियों में से जो ज़ी सलाहियत हों"

तुम्हारे गुलामों और बांदियों में से जो समझदार हों और उनके किरदार के बारे में भी तुम्हें ऐतमाद हो उनके आपस में निकाह कर दिया करो। गुलामों और कनीज़ों के निकाह उनके आक़ाओं की इजाज़त से होंगे और जब किसी कनीज़ का निकाह हो जायेगा तो फिर उसके आक़ा को उसके साथ तमत्ताअ की इजाज़त नहीं होगी।

اِنْ يَّكُوْنُوْا فُقَرَاۗءَ يُغْنِهِمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۭ

"अगर वो तंगदस्त होंगे तो अल्लाह उन्हें अपने फ़ज़ल से ग़नी कर देगा।"

चुनाँचे यह अंदेशा नहीं होना चाहिए कि उनमें महर वग़ैरह अदा करने की इस्तताअत नहीं तो निकाह क्योंकर करें!

وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ـــ32

"और अल्लाह बहुत वुसअत वाला, सब कुछ जानने वाला है।"

वो बहुत कुशादगी वाला है और अपने बंदों के अहवाल वाक़ई से बख़ूबी वाक़िफ़ भी है। इससे यह मफ़हूम भी निकलता है कि कोई इंसान अपनी तंगदस्ती को अपने निकाह के रास्ते की रुकावट ना समझे। उसे उम्मीद रखनी चाहिए कि उसकी बीवी अपनी क़िस्मत और अपना रिज़्क़ अपने साथ लेकर आयेगी और यह कि निकाह के बाद अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल ख़ास से उसके लिए रिज़्क़ का कोई नया दरवाज़ा खोल देगा।

आयत 33

وَلْيَسْتَعْفِفِ الَّذِيْنَ لَا يَجِدُوْنَ نِكَاحًا

"और ख़ुद को बचाये रखें वो लोग जो निकाह की क़ुदरत ना पायें"

जो लोग निकाह करने की बिल्कुल इस्तेआत न रखतें हों,यानि उनके पास न तो महर अदा करने के लिए कुछ हो,न नाननुफ़्ता के लिए कोई ज़रिए मआश हो और न ही सर छुपाने के लिए किसी क़िस्म की छत का बंदोंबस्त हो,तो ऐसे लोगों को चाहिए कि अपनी अफ़त व इसमत की हिफ़ाजत करते रहें और अपनी ख़्वाहिश को अपने काबू में रखें।

حَتّٰى يُغْنِيَهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ؕ

"यहाँ तक कि अल्लाह उन्हें अपने फ़ज़्ल से ग़नी कर दे।"

وَالَّذِيْنَ يَبْتَغُوْنَ الْكِتٰبَ مِمَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ

"और जो मकातबत करना चाहें तुम्हारे ममलूकों में से"

आक़ा और गुलाम के दरमियान आज़ादी के मुआहिदे को मकातबत कहा जाता है। यह मुआहिदा गुलाम की ख़्वाहिश और आक़ा की रज़ामंदी से तय पाता था कि आक़ा अगर अपने गुलाम को आज़ाद कर दे तो वह एक मुक़र्रर मुद्दत तक तयशुदा रक़म अपने आक़ा को मुआवज़े के तौर पर अदा करेगा।

فَكَاتِبُوْهُمْ اِنْ عَلِمْتُمْ فِيْهِمْ خَيْرًا ڭ

"तो उनसे मकातबत कर लिया करो, अगर तुम समझो कि उनमें भलाई है"

अगर तुममें से किसी को अपने गुलाम पर ऐतमाद हो कि वह अपना मुआहिदा पूरा करेगा और भागने की कोशिश नहीं करेगा तो उसे ज़रूर ऐसा मुआहिदा कर लेना चाहिए। इस हुक्म से यह भी ज़ाहिर होता है कि क़ुरान ने हर उस इक़दाम की हौसला अफ़ज़ाई की है और हर वह रास्ता खोलने का अहतमाम किया है जिससे तदरीजन गुलामों को आज़ादी मयस्सर आये और गुलामी का खात्मा हो सके।

وَّاٰتُوْهُمْ مِّنْ مَّالِ اللّٰهِ الَّذِيْٓ اٰتٰىكُمْ ۭ

“और उनको उस माल में से दो जो अल्लाह ने तुम्हें दिया है”

यानि जिन गुलामों ने मकातबत की हो तुम लोग अल्लाह के दिये हुए माल में से उनकी ज़्यादा से ज़्यादा माली मआवनत किया करो ताकि वो जल्द अज़ जल्द मुक़र्रर रक़म अदा करके आज़ाद हो सकें।

وَلَا تُكْرِهُوْا فَتَيٰتِكُمْ عَلَي الْبِغَاۗءِ اِنْ اَرَدْنَ تَحَصُّنًا

“और अपने बांदियों को बदकारी पर मज़बूर ना किया करो जबकि वो ख़ुद पाक दामन रहना चाहें”

इसका यह मतलब नहीं कि अगर वो ख़ुद पाक दामन ना रहना चाहती हों तो उनको मजबूर करने की इजाज़त है। “اِنْ اَرَدْنَ تَحَصُّنًا” की क़ैद यहाँ बतौर शर्त के नहीं बल्कि सूरते वाक़िया की ताबीर के लिए है।

لِّتَبْتَغُوْا عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۭ

“ताकि तुम हासिल करो दुनिया की ज़िन्दगी का सामान।”

अरबों के यहाँ यह भी रिवाज था कि वो अपनी बांदियों से पेशा करवाते और उससे हासिल होने वाली कमाई ख़ुद खाते थे। चुनाँचे इस हुक्म से ज़माना-ए-जाहिलियत की इस शर्मनाक रिवायत को भी ख़त्म कर दिया गया। इसी तरह क़ब्ल अज़ इस्लाम अरबों में एक रिवाज यह भी था कि वो अपने बाप की बेवाओं यानि सौतेली माँओं से भी निकाह कर लिया करते थे। इस क़बीह रस्म के खात्मे का हुक्म सूरतुन्निसा की आयत 22 में दिया गया है। गोया क़ब्ल अज़ इस्लाम अरब मआशरे में जो मआशरती बुराईयाँ पाई जाती थीं एक-एक करके उनकी इस्लाह कर दी गई।

وَمَنْ يُّكْرِهْهُّنَّ فَاِنَّ اللّٰهَ مِنْۢ بَعْدِ اِكْرَاهِهِنَّ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ؀33

“और अगर कोई उन्हें मजबूर करेगा तो यक़ीनन अल्लाह उनके जबर के बाद बहुत बख्शने वाला, बहुत रहम करने वाला है।”

अगर कोई अपनी बांदी को बदकारी पर मजबूर करेगा और ख़ुद उस बांदी की मर्ज़ी उसमें शामिल नहीं होगी तो अल्लाह तआला उसकी मजबूरी के बाइस उसके गुनाह को माफ़ फ़रमा देगा और उस गुनाह का वबाल उस पर होगा जिसने उसे इस काम के लिए मजबूर किया होगा।

आयत 34

وَلَقَدْ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكُمْ اٰيٰتٍ مُّبَيِّنٰتٍ وَّ مَثَلًا مِّنَ الَّذِيْنَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ

“और हमने नाज़िल कर दी हैं तुम्हारी तरफ़ यह रौशन आयात और उन लोगों के अहवाल भी जो तुमसे पहले थे”

जो लोग तुमसे पहले हो गुजरे हैं उन्होंने जो गलत अक़ाइद गढ़ रखे थे और उनके अंदर जो-जो मआशरती बुराईयाँ पाई जाती थीं हमने उन सबकी निशानदेही भी इस किताब में कर दी है।

وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِيْنَ ؀34

“और अहले तक़वा के लिए नसीहत भी।”

सूरह युनुस की आयत 57 में भी क़ुरान को मौअज़ा (नसीहत) क़रार दिया गया है: {قَدْ جَاۗءَتْكُمْ مَّوْعِظَةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ} "आ गई है तुम्हारे पास नसीहत तुम्हारे रब की तरफ़ से।"

आयात 35 से 40 तक

اَللّٰهُ نُوْرُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ مَثَلُ نُوْرِهٖ كَمِشْكٰوةٍ فِيْهَا مِصْبَاحٌ ۭ اَلْمِصْبَاحُ فِيْ زُجَاجَةٍ ۭ اَلزُّجَاجَةُ كَاَنَّهَا كَوْكَبٌ دُرِّيٌّ يُّوْقَدُ مِنْ شَجَرَةٍ مُّبٰرَكَةٍ زَيْتُوْنَةٍ لَّا شَرْقِيَّةٍ وَّلَا غَرْبِيَّةٍ ۙ يَّكَادُ زَيْتُهَا يُضِيْۗءُ وَلَوْ لَمْ تَمْسَسْهُ نَارٌ ۭ نُوْرٌ عَلٰي نُوْرٍ ۭ يَهْدِي اللّٰهُ لِنُوْرِهٖ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَيَضْرِبُ اللّٰهُ الْاَمْثَالَ لِلنَّاسِ ۭ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۙ؀35 فِيْ بُيُوْتٍ اَذِنَ اللّٰهُ اَنْ تُرْفَعَ وَيُذْكَرَ فِيْهَا اسْمُهٗ ۙ يُسَبِّحُ لَهٗ فِيْهَا بِالْغُدُوِّ وَالْاٰصَالِ ۙ؀36 رِجَالٌ ۙ لَّا تُلْهِيْهِمْ تِجَارَةٌ وَّلَا بَيْعٌ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَاِقَامِ الصَّلٰوةِ وَاِيْتَاۗءِ الزَّكٰوةِ ۪ يَخَافُوْنَ يَوْمًا تَتَقَلَّبُ فِيْهِ الْقُلُوْبُ وَالْاَبْصَارُ ؀37ڎ لِيَجْزِيَهُمُ اللّٰهُ اَحْسَنَ مَا عَمِلُوْا وَيَزِيْدَهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ ۭ وَاللّٰهُ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَاۗءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ؀38 وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اَعْمَالُهُمْ كَسَرَابٍۢ بِقِيْعَةٍ يَّحْسَبُهُ الظَّمْاٰنُ مَاۗءً ۭ حَتّٰٓي اِذَا جَاۗءَهٗ لَمْ يَجِدْهُ شَـيْـــًٔا وَّ وَجَدَ اللّٰهَ عِنْدَهٗ فَوَفّٰىهُ حِسَابَهٗ ۭ وَاللّٰهُ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ۙ؀39 اَوْ كَظُلُمٰتٍ فِيْ بَحْرٍ لُّجِّيٍّ يَّغْشٰـىهُ مَوْجٌ مِّنْ فَوْقِهٖ مَوْجٌ مِّنْ فَوْقِهٖ سَحَابٌ ۭ ظُلُمٰتٌۢ بَعْضُهَا فَوْقَ بَعْضٍ ۭ اِذَآ اَخْرَجَ يَدَهٗ لَمْ يَكَدْ يَرٰىهَا ۭ وَمَنْ لَّمْ يَجْعَلِ اللّٰهُ لَهٗ نُوْرًا فَمَا لَهٗ مِنْ نُّوْرٍ ؀40

यह इस सूरह का पाँचवा रुकूअ है जो अपने मज़ामीन के ऐतबार से बहुत अहम है। मुताअला क़ुरान हकीम के मुन्तख़ब निसाब के दूसरे हिस्से में ईमान की बहस के ज़िमन में एक अहम दर्स (दर्स 7) इस रुकूअ पर मुश्तमिल है। इस रुकूअ की पहली आयत (आयत 35) क़ुरान मजीद की अज़ीम-तरीन आयात में से है। सूरतुल अहज़ाब और सूरतुन्नूर का आपस में जोड़ा होने का ताल्लुक़ है। इन दोनों सूरतों के दरमियान बहुत सी दूसरी मुनास्बतों और मुशाबिहतों के अलावा एक ख़ास बात यह भी है कि सूरतुल अहज़ाब की आयत 35 भी इसी मौज़ू पर है, यानि ईमान और इस्लाम की कैफ़ियात के हवाले से यह दोनों आयात क़ुरान मजीद की अज़ीम-तरीन आयात में से हैं।

इस रुकूअ में ईमान के हवाले से इंसानों की तीन अक़साम ज़ेरे बहस आई हैं। इससे पहले सूरतुल बक़रह के आग़ाज़ में भी दावते हक़ के रद्दे अमल के हवाले से तीन क़िस्म के इंसानों का ज़िक्र हो चुका है। दरअसल दीन की दावत और इस्लामी तहरीक के जवाब में किसी भी मआशरे के अंदर आम तौर पर तीन तरह का रद्दे अमल सामने आता है। कुछ लोग तो नताइज व अवाक़ब से बे-परवाह होकर इस दावत पर दिलो-जान से लब्बैक कहते हैं और फिर अपने अमल से अपने ईमान और दावा की सच्चाई साबित भी कर दिखाते हैं। उनके मुक़ाबले में कुछ लोग दूसरी इंतहा पर होते हैं। वो तअस्सुब, हसद, ज़िद और तकब्बुर की वजह से इंकार व मुख़ालफ़त पर कमर कस लेते हैं और आख़िर दम तक इस पर डटे रहते हैं। इनके अलावा मआशरे में एक तीसरी क़िस्म के लोग भी पाये जाते हैं। यह लोग पूरे यक़ीन और ख़ुलूस के साथ इस दावत को क़ुबूल भी नहीं करते हैं और कुछ दुन्यवी मफ़ादात और मुतफ़र्रिक़ वजूहात के पेशे नज़र मुकम्मल तौर पर उसे रद्द भी नहीं करते। जब हालात कुछ साज़गार हों तो अहले हक़ का साथ देने के लिए तैयार भी हो जाते हैं, लेकिन ज्योंहि कोई आज़माईश आती है या क़ुर्बानी का तक़ाज़ा सामने आता है तो फ़ौरन अपनी राह अलग कर लेते हैं। ऐसे लोगों की दिली कैफ़ियात और किरदार का नक़्शा सूरतुल हज की आयत 11 में यूँ खींचा गया है:

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّعْبُدُ اللّٰهَ عَلٰي حَرْفٍ ۚ فَاِنْ اَصَابَهٗ خَيْرُۨ اطْمَاَنَّ بِهٖ ۚ وَاِنْ اَصَابَتْهُ فِتْنَةُۨ انْقَلَبَ عَلٰي وَجْهِهٖ ڗ خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ ۭ ذٰلِكَ هُوَ الْخُسْرَانُ الْمُبِيْنُ ؀11

"और लोगों में से कोई वह भी है जो अल्लाह की इबादत करता है किनारे पर रह कर, तो अगर उसे कोई फ़ायदा पहुँचे तो उसके साथ मुत्मईन रहे और अगर उसे कोई आज़माईश आ जाये तो मुँह के बल उल्टा फिर जाये। यह ख़सारा है दुनिया और आख़िरत का, यह बहुत ही बड़ी तबाही है।"

ज़ेरे मुताअला आयात में एक दूसरे ज़ाविये से मआशरे के तीन किरदारों का ज़िक्र किया गया है। उनमें पहली क़िस्म ऐसे सलीमुल फ़ितरत इंसानों

की है जिनके दिलों में अल्लाह की मारफ़त फ़ितरी तौर पर पाई जाती है। फिर जब वही के पैग़ाम तक उनकी रसाई होती है तो वह उसके फैज़ व बरकात से भी बेहतरीन अंदाज़ में मुस्तफ़ीज़ होते हैं। नतीजतन उनका बातिन ईमाने हक़ीक़ी के नूर से जगमगा उठता है। ऐसे लोगों की इस कैफ़ियत को यहाँ "नूरुन अला नूर" से ताबीर किया गया है। दूसरी इंतहा पर वो लोग हैं जिनके दिल नूरे ईमान से महरूम हैं। वो ख़ालिस दुनिया परस्त इंसान हैं जिनके दामन झूठ-मूठ की नेकियों से भी खाली हैं। उनके दिलों में ज़िन्दगी भर नफ़्सानी ख़्वाहिशात के अलावा किसी और ख्याल और जज़्बे का गुज़र तक नहीं होता। उन लोगों की इस कैफ़ियत का नक़्शा " ظُلُمٰتٌ بَعْضُهَا فَوْقَ بَعْضٍ" के अल्फ़ाज़ में खींचा गया है। इन दोनों इंतहाओं के दरमियान एक तीसरा किरदार भी है, जिसका ज़िक्र यहाँ किया गया है। इस किरदार के हामिल वो लोग हैं जिनके दिल अग़रचे हक़ीक़ी ईमान से महरूम हैं, लेकिन वो अपने ज़मीर को मुत्मईन करने या दुन्यवी अग़राज़ व मक़ासिद के लिए नेकी के काम भी करते रहते हैं। ऐसे लोगों के नेक आमाल को यहाँ सराब से तश्बीह दी गई है।

आयत 35

"अल्लाह नूर है आसमानों और ज़मीन का।" اَللّٰهُ نُوْرُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ

"उसके नूर की मिसाल ऐसे है जैसे एक ताक़" مَثَلُ نُوْرِهٖ كَمِشْكٰوةٍ

नूर से मुराद यहाँ नूरे ईमान है, यानि अल्लाह पर ईमान के नूर की मिसाल एक ताक़ की सी है:

"उस (ताक़) में एक रौशन चिराग़ है, वह चिराग़ शीशे (के फ़ानूस) में है।" فِيْهَا مِصْبَاحٌ ۭ اَلْمِصْبَاحُ فِيْ زُجَاجَةٍ ۭ

वह चिराग़ शीशे के फ़ानूस में रखा गया है, जैसे पिछले ज़माने में शीशे की चिमनियों में चिराग़ रखे जाते थे।

"और वह शीशा एक चमकदार सितारे की मानिंद है" اَلزُّجَاجَةُ كَاَنَّهَا كَوْكَبٌ دُرِّيٌّ

इस मिसाल में इंसानी सीने को ताक़ और दिल को चिराग़ से तश्बीह दी गई है। इंसानी पसलियों का ढ़ाँचा, जिसे हम सीना कहते हैं, यह नीचे से चौड़ा और ऊपर से तंग होने की वजह से पुराने ज़माने के ताक़ से मुशाबिहत रखता है। डायफ्राम (diaphragm) जो निचले धड़े के अंदरूनी हिस्से (abdominal cavity) को सीने के अंदरूनी हिस्से (chest cavity) से अलैहदा करता है इस ताक़ का गोया फ़र्श है जिसके ऊपर यह चिराग़ यानि दिल रखा गया है। यह दिल एक बंदा-ए-मोमिन का दिल है जो नूरे ईमान से जगमगा रहा है। यह नूरे ईमान मज्मुआ है नूरे फ़ितरत (जो उसकी रूह के अंदर पहले से मौजूद था) और नूरे वही का।

يُّوْقَدُ مِنْ شَجَرَةٍ مُّبٰرَكَةٍ زَيْتُوْنَةٍ لَّا شَرْقِيَّةٍ وَّلَا غَرْبِيَّةٍ ۙ

"वह (चिराग़) जलाया जाता है ज़ैतून के एक मुबारक दरख़्त से, जो ना शरक़ी है ना ग़रबी"

किसी दरख़्त पर जिस सिम्त से धूप पड़ती हो, उसी सिम्त के हवाले से वह शरक़ी या ग़रबी कहलाता है। अगर कोई दरख़्त किसी ओट में हो या दरख़्तों के झुंड के अंदर हो तो उस पर सिर्फ़ एक सिम्त से ही धूप पड़ सकती है। इस लिहाज़ से ऐसा दरख़्त या शरक़ी होगा या ग़रबी। लेकिन यहाँ एक मिसाली दरख़्त की मिसाल दी जा रही है जो ना शरक़ी है और ना ग़रबी। वह ना तो किसी ओट में है और ना ही दरख़्तों के झुंड में, बल्कि वह खुले मैदान में बिल्कुल यका व तन्हा खड़ा है और पूरे दिन की धूप मुसलसल उस पर पड़ती है। इस मज़मून की अहमियत यह है कि ज़ैतून का वह दरख़्त जिस पर ज़्यादा से ज़्यादा धूप पड़ती हो और मशरिक़ व मगरिब दोनों सिम्तों से पड़ती हो, उसके फलों का रोग़न बहुत साफ़, शफ्फाफ़ और आला मैयार का होता है।

يَّكَادُ زَيْتُهَا يُضِيْٓءُ وَلَوْ لَمْ تَمْسَسْهُ نَارٌ ۭ

"क़रीब है कि उसका रोग़न (ख़ुद-ब-ख़ुद) रौशन हो जाये, चाहे उसे आग ने अभी छुआ भी ना हो।"

गोया वो आग के छुए बग़ैर ही भड़क उठने के लिए तैयार है।

نُوْرٌ عَلٰي نُوْرٍ ۭ

"रौशनी पर रौशनी!"

यानि जब उसे आग दिखाई जाये तो वह भड़क उठता है और नूरुन अला नूर की कैफ़ियत पैदा हो जाती है।

यह ख़ूबसूरत मिसाल ईमान के अज्ज़ा-ए-तरकीबी के बारे में है और मैंने मुख्तलिफ़ मौक़ों पर इस मिसाल की वज़ाहत बहुत तफ़सील से की है। इस तफ़सील का खुलासा यह है कि फ़ितरते इंसानी के अंदर अल्लाह तआला की मारफ़त या उस पर ईमान की कैफ़ियत पैदाईशी तौर पर मौजूद है, मगर दुनिया में रहते हुए यह मारफ़त माहौल और हालात के मन्फ़ी असरात के बाइस आम तौर पर ग़फ़लत और माद्दियत के पर्दों में छुप कर शऊर से ओझल हो जाती है। अलबत्ता कुछ लोग इस हद तक सलीमुल फ़ितरत होते हैं कि उनके अन्दर मारफ़ते ख़ुदावंदी ख़ारजी हालात के तमामतर मन्फ़ी असरात के बावजूद भी मुसलसल उजागर और फ़आल रहती है।

फ़ितरी मारफ़त की इस रौशनी के बाद इंसानी हिदायत का दूसरा बड़ा ज़रिया मिम्बा-ए-वही-ए-इलाही है। वही के ज़रिए हासिल होने वाली हिदायत बुनियादी तौर पर इंसानी फ़ितरत के अंदर पहले से मौजूद वग़ैरह फ़आल और ख़्वाबीदा (dormant) ईमान और मारफ़ते ख़ुदावंदी को बेदार और फ़आल (activate) करने में मदद देती है। चुनाँचे जब वही का पैग़ाम लोगों तक पहुँचता है तो उस पर हर इंसान का रद्दे अमल उसकी फ़ितरत के मुताबिक़ होता है। अगर किसी इंसान की फ़ितरत में तकद्दुर (खटास) है तो वह वही के इस पैग़ाम की तरफ़ फ़ौरी तौर पर मुतवज्जह नहीं होता। ऐसे शख़्स की फ़ितरत की कसाफ़त को दूर करने और उसके अंदर फ़ितरी

तौर पर मौजूद मारफ़ते ख़ुदावंदी को गफ़लत के पर्दों से निकाल कर शऊर की सतह पर लाने के लिए वक़्त और मेहनत की ज़रुरत होती है। दूसरी तरफ़ एक सलीमुल फ़ितरत इंसान वही के पैग़ाम को पहचानने में ज़र्रा भर तायमुल व ताख़ीर नहीं करता। फ़ितरी मारफ़त उसके अंदर चूँकि पहले से शऊरी सतह पर मौजूद होती है इसलिये नूरे वही ज्योंहि उसके सामने आती है उसके दिल का आइना जगमगा उठता है और वह फ़ौरन उस पैग़ाम की तस्दीक़ कर देता है। ऐसे लोग पैग़ामे वही की फ़ौरी तस्दीक़ की वजह से "सिद्दीक़ीन" कहलाते हैं। इस हवाले से नबी मुकर्रम ﷺ का यह फ़रमान भी ज़हन में ताज़ा कर लीजिए कि "मैंने जिस किसी को भी ईमान की दावत दी उसने कुछ ना कुछ तवक्कुफ़ या तरद्दुद ज़रुर किया, सिवाय अबु बक्र रज़ि. के, जिन्होंने एक लम्हे का भी तवक्कुफ़ नहीं किया।" सूरतुल तौबा की आयत 100 में जिन ख़ुश नसीब लोगों को: {وَالسّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ} का ख़िताब मिला, ये वही लोग थे जिनकी फ़ितरत के आईने ग़ैरमामूली तौर पर शफ्फ़ाफ़ थे। दूसरी तरफ़ उसी माहौल में कुछ ऐसे लोग भी थे जिनकी फ़ितरत के तकद्दुर को दूर करने के लिए इज़ाफ़ी वक़्त और मेहनत की ज़रुरत पड़ी। ऐसे लोग बाद मे अपनी-अपनी तबियत की कैफ़ियत और इस्तताअत के मुताबिक़ "साबिक़ूनल अव्वलून" की पैरवी करने वालों की सफ़ में शामिल होते रहे। उन लोगों का ज़िक्र इसी आयत में {وَالَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُمْ بِاِحْسَانٍ} के अल्फ़ाज़ में हुआ है।

आयत ज़ेरे मुताअला में दी गई मिसाल को समझने के लिए तेल की मुख्तलिफ़ अक़साम के फ़र्क़ को समझना भी ज़रूरी है। पुराने ज़माने में तेल के दिये जलाए जाते थे। हमारे यहाँ आमतौर पर उनमें सरसों का तेल जलाया जाता था जिसे कड़वा तेल कहा जाता था। यह तेल ज़्यादा कसीफ़ होने की वजह से दियासलाई दिखाने पर भी आग नहीं पकड़ सकता। चुनाँचे उसे कपड़े या रुई के फ़तीले (बत्ती) की मदद से चलाया जाता था। इसके मुक़ाबले में पेट्रोल भी एक तेल है जो जलने के लिए हर वक़्त बेताब रहता है और छोटी सी चिंगारी भी अगर उसके क़रीब आ जाये तो भड़क उठाता है। जलने के ऐतबार से जिस तरह कड़वे तेल और पेट्रोल में फ़र्क़ है इसी नौइयत का फ़र्क़ इंसानी तबाअ में भी पाया जाता है। चुनाँचे मज़कूरा मिसाल में आला क़िस्म के ज़ैतून से हासिल शुदा इन्तहाई शफ्फ़ाफ़ तेल गोया "सिद्दीक़ीन" की फ़ितरते सलीम है जो वही-ए-इलाही के नूर से मुस्तफ़ीद होने और "नूरुन अला नूर" की कैफ़ियत को पाने के लिए हर वक़्त बेताब व बेचैन रहती है। गोया इंसानी रूह एक नूरानी या मलकूती चीज़ है। इस मलकूती रूह से जब वही या कुरान के नूर का इत्तेसाल होता है तो नूरुन अला नूर की कैफ़ियत पैदा होती है और इसी कैफ़ियत से नूरे ईमान वजूद में आता है, जिससे बंदा-ए-मोमिन का दिल मुनव्वर होता है।

يَهْدِي اللّٰهُ لِنُوْرِهٖ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ

"अल्लाह हिदायत देता है अपने नूर की जिसको चाहता है।"

وَيَضْرِبُ اللّٰهُ الْاَمْثَالَ لِلنَّاسِ ۭ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۙ 35

"और अल्लाह यह मिसालें बयान करता है लोगों (की रहनुमाई) के लिए, जबकि अल्लाह तो हर चीज़ का इल्म रखने वाला है।"

यह मिसाल लोगों को समझाने के लिए बयान की गई है, क्योंकि इंसानी ज़हन ऐसे लतीफ़ हक़ाइक़ को बराहेरास्त नहीं समझ सकता। अब आइंदा आयात में उन लोगों के किरदार व अमल की झलक दिखाई जा रही है जिनके दिल नूरे ईमान से मुनव्वर होते हैं।

आयत 36

فِيْ بُيُوْتٍ اَذِنَ اللّٰهُ اَنْ تُرْفَعَ وَيُذْكَرَ فِيْهَا اسْمُهٗ ۙ

"(उसके नूर की तरफ़ हिदायत पाने वाले) उन घरो में (पाये जाते हैं) जिनके मुताल्लिक़ अल्लाह ने हुक्म दिया है कि उनको बुलंद किया जाये और उनमें उसका नाम लिया जाये"

इन घरों से मुराद मसाजिद हैं और इन्हें बुलंद करने के दो मायने हैं। एक यह की मसाजिद की तामीर इस अंदाज़ और ऐसी जगहों पर की जाये कि वह पूरी आबादी में बहुत नुमायाँ और मरकज़ी हैसियत की हमिल हों और दूसरे यह कि उनके माअनवी तरफ्फ़ा को यक़ीनी बनाया जाये और हर क़िस्म की माअनवी नजासत से उन्हें पाक रखा जाये।

يُسَبِّحُ لَهٗ فِيْهَا بِالْغُدُوِّ وَالْاٰصَالِ ۙــ36

"वो तस्बीह करते हैं अल्लाह की उन (मसाजिद) में सुबह और शाम।"

यह साहिबे ईमान लोग जिनके दिलों में नूरे ईमान की क़न्दीलें रौशन हैं वो अल्लाह के उन घरों में सुबह व शाम उसका ज़िक्र और उसकी तस्बीह करते रहते हैं।

आयत 37

رِجَالٌ لَّا تُلْهِيْهِمْ تِجَارَةٌ وَّلَا بَيْعٌ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَاِقَامِ الصَّلٰوةِ وَاِيْتَاۗءِ الزَّكٰوةِ ۽

"वो जवाँ मर्द जिन्हें ग़ाफिल नहीं करती किसी क़िस्म की कोई तिजारत व ख़रीद व फ़रोख़्त अल्लाह के ज़िक्र से, नमाज़ क़ायम करने से और ज़कात अदा करने से।"

يَخَافُوْنَ يَوْمًا تَتَقَلَّبُ فِيْهِ الْقُلُوْبُ وَالْاَبْصَارُ ــ37ۃ

"(उस सब कुछ के बावजूद भी) वो लरज़ाँ व तरसाँ रहते हैं उस दिन के तसव्वुर से जिस दिन उलट जायेंगे दिल और निगाहें।"

आयत 38

لِيَجْزِيَهُمُ اللّٰهُ اَحْسَنَ مَا عَمِلُوْا وَيَزِيْدَهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ ۭ

"ताकि अल्लाह उन्हें बेहतरीन जज़ा दे उनके आमाल की और उनको अपने फ़ज़ल से मज़ीद नवाज़े।"

وَاللّٰهُ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ۝38

"और अल्लाह जिसको चाहता है अता करता है बग़ैर हिसाब के।"

यह तो थी एक मोमिन सादिक़ के दिल और उसकी कैफ़ियत ईमान के बारे में तम्सील और उसके किरदार की एक झलक। अब अगली दो आयात में उन लोगों के आमाल के बारे में दो तम्सीलें बयान की गई हैं जिनके दिल ईमाने हक़ीक़ी की रौशनी से यक्सर खाली हैं मगर वो अपने दिल की तसल्ली और अपने ज़मीर के इत्मिनान के लिए नेकी के मुख़्तलिफ़ काम सरअंजाम देते रहते हैं। इन तम्सीलों से यह वाज़ेह होता है कि ऐसे लोगों की नेकियाँ अल्लाह के यहाँ क़ाबिले क़ुबूल नहीं हैं। इन आयात का मुताअला करते हुए सूरतुल बक़रह की आयत 177 (आयतुल बिर्र) के अल्फ़ाज़ और इन अल्फ़ाज़ का मफ़हूम एक दफ़ा अपने ज़हन में फिर से ताज़ा कर लें"

لَيْسَ الْبِرَّ اَنْ تُوَلُّوْا وُجُوْهَكُمْ قِبَلَ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ وَلٰكِنَّ الْبِرَّ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَالْمَلٰۗىِٕكَةِ وَالْكِتٰبِ وَالنَّبِيّٖنَ ۚ وَاٰتَى الْمَالَ عَلٰي حُبِّهٖ ذَوِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنَ وَابْنَ السَّبِيْلِ ۙ وَالسَّاۗىِٕلِيْنَ وَفِي الرِّقَابِ ۚ وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ ۚ وَالْمُوْفُوْنَ بِعَهْدِهِمْ اِذَا عٰهَدُوْا ۚ وَالصّٰبِرِيْنَ فِي الْبَاْسَاۗءِ وَالضَّرَّاۗءِ وَحِيْنَ الْبَاْسِ ۭ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ صَدَقُوْا ۭ وَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْمُتَّقُوْنَ ۝١٧٧

"नेकी यही नहीं है कि तुम अपने चेहरे मशरिक़ और मग़रिब की तरफ़ फेर लो, बल्कि नेकी तो उसकी है जो ईमान लाये अल्लाह पर, यौमे आख़िरत पर, फ़रिश्तों पर, किताबों पर और नबियों पर। और वो माल ख़र्च करे उस (माल) की मुहब्बत के बावजूद, क़राबत दारों, यतीमों, मोहताजों, मुसाफ़िरों और माँगने वालों पर और गर्दनों के छुड़ाने में, और क़ायम करे नमाज़ और अदा करे ज़कात, और जो पूरा करने वालें हैं अपने अहद को जब कोई अहद कर लें, और सब्र करने वालें हैं फ़क़र व फ़ाक़ा में, तकालीफ़ में और जंग की हालत में। यह हैं वो लोग जो सच्चे हैं और यही हक़ीक़त में मुत्तक़ी हैं।"

अब मुलाहिज़ा कीजिए ईमाने हक़ीक़ी के बग़ैर अंजाम दिए गये नेक आमाल की मिसाल:

आयत 39

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اَعْمَالُهُمْ كَسَرَابٍۢ بِقِيْعَةٍ يَّحْسَبُهُ الظَّمْاٰنُ مَاۗءً ۭ

"और जो काफ़िर हैं उनके आमाल ऐसे हैं जैसे सराब किसी चटियल मैदान में, प्यासा उसे पानी समझता है।"

حَتّٰٓي اِذَا جَاۗءَهٗ لَمْ يَجِدْهُ شَـيْـــًٔـا وَّ وَجَدَ اللّٰهَ عِنْدَهٗ فَوَفّٰىهُ حِسَابَهٗ ۭ

"यहाँ तक कि वो जब उसके पास आया तो उसने वहाँ कुछ ना पाया, अलबत्ता उसने उसके पास अल्लाह को पाया, तो उसने पूरा-पूरा चुका दिया उसे उसका हिसाब।"

وَاللّٰهُ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ۝39

"और अल्लाह बहुत जल्द हिसाब लेने वाला है।"

यानि अगर किसी शख़्स का दिल हक़ीक़ी ईमान से महरूम है तो ख़िदमते ख़ल्क़ के मैदान में उसके कारनामों और दूसरे नेक कामों की अल्लाह के नज़दीक कोई वक़अत नहीं। ऐसी नेकियाँ तो गोया सराब (धोखा) हैं। जैसे

सहरा में एक प्यासा शख़्स सराब (चमकती हुई रेत) को पानी समझता है इसी तरह यह लोग भी अपने आमाल को नेकियों का ढ़ेर समझते हैं, लेकिन रोज़े हिसाब उन पर अचानक यह हक़ीक़त खुलेगी कि उनका कोई अमल भी अल्लाह के यहाँ शर्फ़े क़ुबूलियत नहीं पा सका। सूरह इब्राहीम की आयत 18 में ऐसे लोगों के आमाल को राख के उस ढ़ेर से तश्बीह दी गई है जो तेज़ आँधी की ज़द में हो।

इस सिलसले की दूसरी मिसाल उन लोगों के बारे में है जिनकी ज़िंदगियाँ ऐसी झूठ-मूठ की नेकियों से भी खाली हैं और उनके बातिन सरासर शहवाते नफ़्स और दुनिया परस्ती की गंदगी से भरे पड़े हैं:

आयत 40

اَوْ كَظُلُمٰتٍ فِيْ بَحْرٍ لُّـجِّيٍّ يَّغْشٰـىهُ مَوْجٌ مِّنْ فَوْقِهٖ مَوْجٌ مِّنْ فَوْقِهٖ سَحَابٌ ۭ

"या बहुत गहरे समुद्र मे अंधेरों की मानिंद, उसे ढ़ाँप लेती हो एक मौज, उसके ऊपर हो एक और मौज, उसके ऊपर हों बादल"

यानि अंधेरी रात है, समुद्र की गहराई में मौज दर मौज की कैफ़ियत है और ऊपर फ़ज़ा में गहरे बादल छाए हुए हैं। गोया रौशनी की किसी एक किरण का भी कहीं कोई वजूद नहीं।

ظُلُمٰتٌۢ بَعْضُهَا فَوْقَ بَعْضٍ ۭ اِذَآ اَخْرَجَ يَدَهٗ لَمْ يَكَدْ يَرٰىهَا ۭ

"अंधेरे ही अंधेरे हैं एक दूसरे के ऊपर, जब वह अपना हाथ निकालता है तो उसे भी नहीं देख सकता।"

मुतल्क़ तारीकी (absolute darkness) की इस कैफ़ियत को उर्दू मुहावरे में यूँ बयान किया जाता है कि हाथ को हाथ सुझाई नहीं देता। एक फ्रेंच एड्मर्ल इस आयत को पढ़ कर मुसलमान हो गया था। उसकी सारी उम्र समुद्रों में गुज़री थी और पानी के नीचे absolute darkness की कैफ़ियत उसने अपनी आँखों से देखी थी। यह आयत पढ़ कर उसे बजा तौर पर यह तजस्सुस हुआ कि क्या मुहम्मद (ﷺ) ने बहरी सफ़र भी किये थे? और जब उसे मालूम हुआ कि आप ﷺ ने कभी भी कोई बहरी सफ़र नहीं किया तो उसने ऐतराफ़ कर लिया कि यह उनका कलाम नहीं अल्लाह का कलाम है, क्योंकि ऐसी तश्बीह तो सिर्फ़ वही शख़्स दे सकता है जो समुद्र में गोताख़ोरी करता रहा हो और समुद्र की गहराई में अंधेरों की कैफ़ियत को अपनी आँखों से देख चुका हो।

وَمَنْ لَّمْ يَجْعَلِ اللّٰهُ لَهٗ نُوْرًا فَمَا لَهٗ مِنْ نُّوْرٍ ۝40

"और जिसको अल्लाह ने ही कोई नूर अता ना किया हो तो उसके लिए कहीं कोई नूर नहीं है।"

यानि वो लोग जिनकी ज़िंदगियाँ मल्मअ की नेकियों से भी खाली हैं उनके लिए अंधेरे ही अंधेरे हैं।

आयात 41 से 57 तक

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يُسَبِّحُ لَهٗ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَالطَّيْرُ صٰٓفّٰتٍ ۭ كُلٌّ قَدْ عَلِمَ صَلَاتَهٗ وَتَسْبِيْحَهٗ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِمَا يَفْعَلُوْنَ ؀41 وَلِلّٰهِ مُلْكُ
السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۚ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيْرُ ؀42 اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يُزْجِيْ سَحَابًا ثُمَّ يُؤَلِّفُ بَيْنَهٗ ثُمَّ يَجْعَلُهٗ رُكَامًا فَتَرَى الْوَدْقَ يَخْرُجُ مِنْ خِلٰلِهٖ ۚ وَيُنَزِّلُ مِنَ
السَّمَاۗءِ مِنْ جِبَالٍ فِيْهَا مِنْۢ بَرَدٍ فَيُصِيْبُ بِهٖ مَنْ يَّشَاۗءُ وَيَصْرِفُهٗ عَنْ مَّنْ يَّشَاۗءُ ۭ يَكَادُ سَنَا بَرْقِهٖ يَذْهَبُ بِالْاَبْصَارِ ؀43 يُقَلِّبُ اللّٰهُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ ۭ
اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَعِبْرَةً لِّاُولِي الْاَبْصَارِ ؀44 وَاللّٰهُ خَلَقَ كُلَّ دَاۗبَّةٍ مِّنْ مَّاۗءٍ ۚ فَمِنْهُمْ مَّنْ يَّمْشِيْ عَلٰي بَطْنِهٖ ۚ وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّمْشِيْ عَلٰي رِجْلَيْنِ ۚ وَمِنْهُمْ مَّنْ
يَّمْشِيْ عَلٰٓي اَرْبَعٍ ۭ يَخْلُقُ اللّٰهُ مَا يَشَاۗءُ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ؀45 لَقَدْ اَنْزَلْنَآ اٰيٰتٍ مُّبَيِّنٰتٍ ۭ وَاللّٰهُ يَهْدِيْ مَنْ يَّشَاۗءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ
؀46 وَيَقُوْلُوْنَ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَبِالرَّسُوْلِ وَاَطَعْنَا ثُمَّ يَتَوَلّٰى فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ ۭ وَمَآ اُولٰۗىِٕكَ بِالْمُؤْمِنِيْنَ ؀47 وَاِذَا دُعُوْٓا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ
لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ اِذَا فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ مُّعْرِضُوْنَ ؀48 وَاِنْ يَّكُنْ لَّهُمُ الْحَقُّ يَاْتُوْٓا اِلَيْهِ مُذْعِنِيْنَ ؀49 اَفِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ اَمِ ارْتَابُوْٓا اَمْ يَخَافُوْنَ اَنْ يَّحِيْفَ
اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَرَسُوْلُهٗ ۭ بَلْ اُولٰۗىِٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ؀50 اِنَّمَا كَانَ قَوْلَ الْمُؤْمِنِيْنَ اِذَا دُعُوْٓا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ اَنْ يَّقُوْلُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۭ
وَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ؀51 وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَخْشَ اللّٰهَ وَيَتَّقْهِ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفَاۗىِٕزُوْنَ ؀52 وَاَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَىِٕنْ اَمَرْتَهُمْ
لَيَخْرُجُنَّ ۭ قُلْ لَّا تُقْسِمُوْا ۚ طَاعَةٌ مَّعْرُوْفَةٌ ۭ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ؀53 قُلْ اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ ۚ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا عَلَيْهِ مَا حُمِّلَ
وَعَلَيْكُمْ مَّا حُمِّلْتُمْ ۭ وَاِنْ تُطِيْعُوْهُ تَهْتَدُوْا ۭ وَمَا عَلَي الرَّسُوْلِ اِلَّا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ؀54 وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِي
الْاَرْضِ كَمَا اسْتَخْلَفَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۠ وَلَيُمَكِّنَنَّ لَهُمْ دِيْنَهُمُ الَّذِي ارْتَضٰى لَهُمْ وَلَيُبَدِّلَنَّهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ خَوْفِهِمْ اَمْنًا ۭ يَعْبُدُوْنَنِيْ لَا يُشْرِكُوْنَ بِيْ شَـيْــــًٔا ۭ
وَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ؀55 وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ ؀56 لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مُعْجِزِيْنَ
فِي الْاَرْضِ ۚ وَمَاْوٰىهُمُ النَّارُ ۭ وَلَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ؀57

आयत 41

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يُسَبِّحُ لَهٗ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ

"क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह की तस्बीह करते हैं जो कोई आसमानों और ज़मीन में हैं"

ना सिर्फ़ आसमानों और ज़मीन की तमाम मख्लूक़ात अल्लाह की तस्बीह करती हैं बल्कि इन दोनों (आसमा व ज़मीन) के माबैन जो मख्लूक़ है वो भी इसमें शामिल हैं।

وَالطَّيْرُ صٰٓفّٰتٍ ۭ كُلٌّ قَدْ عَلِمَ صَلَاتَهٗ وَتَسْبِيْحَهٗ ۭ

"और परों को फैलाए हुए परिंदे भी। हर एक ने जान ली है अपनी नमाज़ और तस्बीह।"

यही मज़मून सूरह बनी इस्राईल की आयत नम्बर 44 में इस तरह आया है: {وَاِنْ مِّنْ شَيْءٍ اِلَّا يُسَبِّحُ بِحَمْدِهٖ وَلٰكِنْ لَّا تَفْقَهُوْنَ تَسْبِيْحَهُمْ} कि कोई चीज़ इस कायनात में ऐसी नहीं है जो अल्लाह की तस्बीह व तहमीद ना कर रही हो, लेकिन तुम लोगों को उनके तरीका-ए-तस्बीह का शऊर नहीं हो सकता।

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِمَا يَفْعَلُوْنَ ؀41

"और अल्लाह खूब जानता है जो वो करते हैं।"

आयत 42

وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۚ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيْرُ ؀42

"और अल्लाह ही के लिए है आसमानों और ज़मीन की बादशाही, और अल्लाह ही की तरफ़ लौट जाना है।"

आयत 43

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يُزْجِيْ سَحَابًا

"क्या तुम देखते नहीं हो कि अल्लाह हाँक कर लाता है बादलों को"

समुद्र के बुख़ारात से बादल बनते हैं और हवाओं के दविश पर हज़ारों मील का सफ़र तय करके कहीं के कहीं पहुँच जाते हैं।

ثُمَّ يُؤَلِّفُ بَيْنَهٗ ثُمَّ يَجْعَلُهٗ رُكَامًا

"फिर वो उन्हें आपस में जोड़ देता है, फिर उन्हें तह-ब-तह कर देता है।"

जिन लोगों को हवाई सफ़र का तजुर्बा है उन्होंने बादल के तह-ब-तह होने का मंज़र अपनी आँखों से देखा होगा। अब्र आलूद मौसम में बाज़ अवक़ात यूँ भी होता है कि बादलों की एक तह में से जहाज़ ऊपर चढ़ता है और उसके बाद फ़ज़ा साफ़ होती है। फिर ऊपर जाकर बादलों की एक और तह होती है। इस तरह मुतअद्दिद तहें हो सकती हैं।

فَتَرَى الْوَدْقَ يَخْرُجُ مِنْ خِلٰلِهٖ ۚ

"तो तुम देखते हो कि बारिश उनके दरमियान में से बरसती है"

وَيُنَزِّلُ مِنَ السَّمَاۗءِ مِنْ جِبَالٍ فِيْهَا مِنْۢ بَرَدٍ

"और अल्लाह आसमान से उसके अंदर के पहाड़ों से ओले बरसाता है।"

जब ज़मीन पर ओले पूरी शिद्दत से बरस रहे हों तो यूँ मालूम होता है जैसे आसमानों में ओलों के पहाड़ हैं।

فَيُصِيْبُ بِهٖ مَنْ يَّشَاۗءُ وَيَصْرِفُهٗ عَنْ مَّنْ يَّشَاۗءُ ۭ

"तो वो पहुँचाता है उन (ओलों) को जिस पर चाहता है और उनका रुख फेर देता है जिसे चाहता है।"

जब किसी खेती को किसी वजह से बर्बाद करना मक़सूद हो तो उस पर अल्लाह की मशियत से यह ओले बरस पड़ते हैं और जिस खेती को वह तबाह करना नहीं चाहता उसकी तरफ़ से उनका रुख़ फेर देता है। बाज़ अवक़ात देखने में आता है कि एक खेत ओलों से तबाह हो गया, लेकिन उसके साथ ही दूसरा खेत बिल्कुल सलामत रहा।

يَكَادُ سَـنَا بَرْقِهٖ يَذْهَبُ بِالْاَبْصَارِ ۭ 43

"क़रीब है कि उसकी बिजली की कूंद लोगों की निगाहों को उचक ले जाये।"

आयत 44

يُقَلِّبُ اللّٰهُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ ۭ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَعِبْرَةً لِّاُولِي الْاَبْصَارِ 44

"अल्लाह अदलता-बदलता रहता है रात और दिन को। यक़ीनन इसमें इबरत का सामान है आँखों वालों के लिए।"

आयत 45

وَاللّٰهُ خَلَقَ كُلَّ دَاۗبَّةٍ مِّنْ مَّاۗءٍ ۚ فَمِنْهُمْ مَّنْ يَّمْشِيْ عَلٰي بَطْنِهٖ ۚ

"और अल्लाह ने बनाया है हर जानदार को पानी से, तो उनमें कुछ ऐसे (जानवर) हैं जो अपने पेट के बल चलते हैं।"

यह वो जानदार हैं जिन्हें हम reptiles कहते हैं। इनकी टाँगे वग़ैरह नहीं होतीं और वो पेट के बल रेंगते हैं।

وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّمْشِيْ عَلٰي رِجْلَيْنِ ۚ

"और उनमें कुछ वो हैं जो दो टाँगों पर चलते हैं"

ख़ुद हम इंसान भी इसी मख्लूक़ में शामिल हैं। इंसानों के अलावा परिंदे, बन मानस (champanzies) और गौरिल्ले भी दो टाँगो पर चलते हैं। कोई और मख्लूक़ भी ऐसी हो सकती है जो दो टाँगों पर चलती हो।

وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّمْشِيْ عَلٰٓي اَرْبَعٍ ۭ

"और उनमें कुछ ऐसे हैं जो चार टाँगों पर चलते हैं"

ज़मीनी हैवानात में से चार टाँगों वालों की तादाद सबसे ज़्यादा है।

يَخْلُقُ اللّٰهُ مَا يَشَاۗءُ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ   ؀45

"अल्लाह पैदा करता ह जो चाहता है। यक़ीनन अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

आइंदा आयात में मुनाफ़िक़ीन का ज़िक्र होने जा रहा है। इससे पहले सूरह युनुस से लेकर सूरतुल मोमिनून तक चौदह सूरतें मुसलसल मक्कियात थीं। मक्के में मुनाफ़िक़ीन तो थे नहीं लिहाज़ा इन तमाम मक्की सूरतों में ना तो निफ़ाक़ का ज़िक्र आया और ना ही मुनाफ़िक़ीन का तज़किरा हुआ। इन मक्की सूरतों में गुफ़तगू का रुख़ ज़्यादातर मुशरिकीन-ए-मक्का की तरफ़ ही रहा है। कहीं-कहीं अहले किताब का भी ज़िक्र भी आया है, लेकिन उन्हें बराहेरास्त मुख़ातिब नहीं किया गया। इसके अलावा इन सूरतों में हुज़ूर ﷺ को और आपकी वसातत से अहले ईमान को भी मुख़ातिब किया जाता रहा है। सूरह नूर का नुज़ूल मदनी दौर के ऐन वस्त यानि 6 हिजरी में हुआ था और उस वक़्त मदीने के अंदर अच्छी ख़ासी तादाद में मुनाफ़िक़ीन मौजूद थे। यही वजह है कि उनके किरदार का तज़किरा इस सूरत में आया है।

आयत 46

لَقَدْ اَنْزَلْنَآ اٰيٰتٍ مُّبَيِّنٰتٍ ۭ وَاللّٰهُ يَهْدِيْ مَنْ يَّشَاۗءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ؀46

"हमने नाज़िल कर दी हैं रौशन आयात। और अल्लाह हिदायत देता है जिसको चाहता है सीधे रास्ते की तरफ़।"

आयत 47

وَيَقُوْلُوْنَ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَبِالرَّسُوْلِ وَاَطَعْنَا

"और (कुछ लोग वो भी हैं जो) कहते हैं हम ईमान लाये अल्लाह और रसूल ﷺ पर और हमने इताअत क़ुबूल की"

ثُمَّ يَتَوَلّٰى فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ ۭ

"फिर इसके बाद उनमें से एक फ़रीक़ पीठ फेर जाता है।"

यह लोग अल्लाह और उसके रसूल ﷺ पर ईमान का इक़रार भी करते हैं, इताअत का दम भी भरते हैं लेकिन उसके बाद इनका तर्ज़े अमल कुछ और होता है।

وَمَآ اُولٰۗىِٕكَ بِالْمُؤْمِنِيْنَ ؀47

"और यह लोग दर हक़ीक़त मोमिन नही हैं।"

आयत 48

وَاِذَا دُعُوْٓا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ اِذَا فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ مُّعْرِضُوْنَ ؀48

"और जब इन्हें बुलाया जाता है अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ कि वो उनके माबैन फ़ैसला करें, तो उस वक़्त उनमें से एक गिरोह कन्नी कतरा जाता है।"

मुनाफ़िक़ीन के इस रवैय्ये का ज़िक्र सूरह निसा में भी आया है। यह लोग फ़ैसलों के लिए अपने तनाज़ात रसूल ﷺ के बजाय यहूदियों के पास ले जाने को तरजीह देते थे। इसलिए कि हुज़ूर ﷺ के फ़ैसले मब्नी बर इंसाफ़ होने की वजह से आमतौर पर उनके ख़िलाफ़ ही जाते थे।

आयत 49

وَاِنْ يَّكُنْ لَّهُمُ الْحَقُّ يَاْتُوْٓا اِلَيْهِ مُذْعِنِيْنَ ۭ؀49

"और अगर हक़ उनके लिए हो तो वो आते हैं रसूल ﷺ की तरफ़ बड़े इताअत केश बन कर।"

अगर किसी मामले या तनाज़ा में वो हक़ ब-जानिब हों और उन्हें यक़ीन हो कि फ़ैसला उन्हीं के हक़ में होगा तो उस मामले को लेकर बड़े इताअत शआर बनते हुए पूरे ऐतमाद और यक़ीन के साथ वो हुज़ूर ﷺ के पास आ जाते हैं।

आयत 50

اَفِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ اَمِ ارْتَابُوْٓا اَمْ يَخَافُوْنَ اَنْ يَّحِيْفَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَرَسُوْلُهٗ ۭ

"क्या इनके दिलों में रोग है? या यह लोग शक में मुब्तला हैं? या इन्हें अंदेशा है कि अल्लाह और उसका रसूल ﷺ उनके साथ नाइंसाफ़ी करेंगे?"

بَلْ اُولٰۗىِٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ؀50

"बल्कि हक़ीक़त में यही लोग ज़ालिम हैं।"

चूँकि यह लोग हक़ीक़ी ईमान से महरूम हैं, इसलिए इस खोट का अक्स इनके किरदारों में नुमायाँ है।

आयत 51

اِنَّمَا كَانَ قَوْلَ الْمُؤْمِنِيْنَ اِذَا دُعُوْٓا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ اَنْ يَّقُوْلُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۭ

“हक़ीक़ी मोमिनीन को तो जब अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़ बुलाया जाता है कि वह उनके माबैन फ़ैसला करें तो उनका क़ौल बस यही होता है कि हमने सुना और हमने माना!”

कि हम तो फ़ैसले के लिए रसूल अल्लाह ﷺ के हुज़ूर हाज़िर हैं। आप ﷺ जो भी फ़ैसला करेंगे, हमे ब-सर व चश्म क़ुबूल होगा।

وَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ 51؀

“और वही लोग हैं फ़लाह पाने वाले।”

आयत 52

وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَخْشَ اللّٰهَ وَيَتَّقْهِ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفَاۗىِٕزُوْنَ 52؀

“और जो कोई अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करता है और अल्लाह का ख़ौफ रखता है और उसका तक़वा इख़्तियार करता है, तो वही लोग हैं जो कामयाब होने वाले हैं।”

आयत 53

وَاَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَىِٕنْ اَمَرْتَهُمْ لَيَخْرُجُنَّ ۭ

“और वो अल्लाह की क़समें खाकर कहते हैं, अपनी इमकानी हद तक पक्की क़समें कि अगर आप ﷺ उन्हें हुक्म देंगे तो वो ज़रूर निकलेंगे।”

मुनाफ़िक़ीन से जब भी किसी क़ुर्बानी का तक़ाज़ा किया जाता या जिहाद के लिए निकलने का मरहला आता तो वो बहाने तराशते हुए क़समें खाते कि हमें फ़लाँ मजबूरी है, फलाँ मसला दरपेश है, लेकिन अगर आप ﷺ हुक्म देंगे तो हम बहरहाल आप ﷺ के साथ ज़रूर निकलेंगे। जमाती ज़िन्दगी में यह नमूना आज भी देखने को मिलता है। अमीर की तरफ़ से एक वाज़ेह हुक्म आ जाने के बाद भी कुछ लोग बहाने बनाते हैं, अपनी माज़ूरी का इज़हार करते हैं और मजबूरियाँ गिनवाने के बाद यूँ भी कहते हैं कि “वैसे अगर आप हुक्म दें तो हम हाज़िर हैं!” गोया जो पहले हुक्म दिया गया है वह हुक्म नहीं है? अमीर की बात को आप हुक्म क्यों नहीं समझ रहे?

तो क्या जिहाद के लिए एक वाज़ेह हुक्म के बाद मुनाफ़िक़ीन यह तवक्क़ो रखते हैं कि हुज़ूर ﷺ उनमें से हर एक की अलग-अलग ख़ुशामद करके उसे राज़ी करें कि अजी! आप ज़रूर जिहाद के लिए तशरीफ़ ले जायें!

قُلْ لَّا تُقْسِمُوْا ۚ طَاعَةٌ مَّعْرُوْفَةٌ ۭ

“आप ﷺ उनसे कहिये कि तुम लोग क़समें ना खाओ, बस मारूफ़ तरीक़े से इताअत इख़्तियार करो।”

जब तुम लोग मुझे अल्लाह का रसूल तस्लीम करने और मुझ पर ईमान लाने का दावा करते हो तो बाक़ी तमाम अहले ईमान की तरह मेरी इताअत इख़्तियार करो। मेरी तरफ़ से जो हुक्म तुम्हें दिया जाता है उसे क़ुबूल करो।

اِنَّ اللّٰہَ خَبِیْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۵۳

"यक़ीनन जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे बाखबर है।"

आयत 54

قُلْ اَطِیْعُوا اللّٰہَ وَاَطِیْعُوا الرَّسُوْلَ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ) आप कहिए कि तुम लोग इताअत करो अल्लाह की और इताअत करो रसूल ﷺ की।"

क़ब्ल अज़ें सूरह अन्निसा के मुताअले के दौरान वज़ाहत की जा चुकी है कि मुनाफ़िक़ीन पर तीन अमूर बहुत भारी थे। यानि हुज़ूर ﷺ की शख़्सी इताअत, जिहाद व क़िताल के लिए निकलना और हिजरत। चुनाँचे आयत ज़ेरे नज़र में इन तीन में से पहले मामले यानि अल्लाह और रसूल ﷺ की इताअत के बारे में ताकीद की जा रही है।

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا عَلَیْہِ مَا حُمِّلَ وَعَلَیْکُمْ مَّا حُمِّلْتُمْ ۭ

"फिर अगर तुम मुँह मोड़ते हो तो सुन रखो कि हमारे नबी ﷺ पर सिर्फ़ वही ज़िम्मेदारी है जो उन पर डाली गई है और तुम पर वो ज़िम्मेदारी है जो तुम पर डाली गई है।"

रसूल अल्लाह ﷺ की ज़िम्मोदारी लोगों तक अल्लाह का पैग़ाम पहुँचाने की हद तक है और आप ﷺ से इसी ज़िम्मेदारी के सिलसिले में पूछा जायेगा। अब जब आप ﷺ ने तुम लोगों तक अल्लाह का पैग़ाम पहुँचा कर अपनी यह ज़िम्मेदारी अदा कर दी है तो उसके बाद इन अहकाम की तामील करना और अल्लाह के दीन के लिए तन-मन-धन क़ुर्बान करना तुम लोगों की ज़िम्मेदारी है और तुम लोग अपनी इसी ज़िम्मेदारी के बारे में अल्लाह के यहाँ मसऊल होगे।

इन अल्फ़ाज़ में जमाती ज़िन्दगी के नज़्म व ज़ब्त के बारे में एक बहुत ही अहम और बुनियादी रहनुमा उसूल फ़राहम किया गया है कि हर कोई अपनी उस ज़िम्मेदारी की फ़िक्र करे जिसके बारे में वो मसऊल है। जमाती ज़िन्दगी में इन्फ़रादी सतह पर अक्सर शिकायात पैदा हो जाती हैं, यहाँ तक कि एक ग़जवे के मौक़े पर हुज़ूर ﷺ जब माले ग़नीमत तक़सीम कर रहे थे तो बनी तमीम के एक शख़्स ने कहा: !اِعْدِلْ یَا رَسُوْلَ اللّٰہِ "ऐ अल्लाह के रसूल, आप अदल करें!" गोया (नऊज़ु बिल्लाह) आप ﷺ अदल नहीं कर रहे थे। इस गुस्ताखी के जवाब में आप ﷺ ने गुस्से में फ़रमाया: ((وَیْلَکَ، وَمَنْ یَعْدِلُ اِذَا لَمْ اَعْدِلْ؟))[13] "तुम बर्बाद हो जाओ, अगर मैं अदल नहीं करूँगा तो फिर कौन अदल करेगा?" इसी तरह जमाती ज़िन्दगी के मामलात में किसी शख़्स को भी अपने अमीर से शिकायत हो सकती है कि अमीर ने उसके साथ ज़्यादती की है। ऐसी सूरत में इस आयत में दिये गये उसूल को मद्देनज़र रखना चाहिए कि जिस शख़्स

की जो ज़िम्मेदारी है उसके बारे में वो अल्लाह के यहाँ जवाबदेह है। अगर कोई शख्स अपनी ज़िम्मेदारी में कमी या कोताही करेगा या कोई किसी के साथ ज़्यादती करेगा तो अल्लाह के यहाँ हर किसी का ठीक-ठीक हिसाब हो जायेगा। चुनाँचे जमाअत के अंदर एक शख़्स को किसी शिकायत की सूरत में नाराज़ होकर बैठे रहने के बजाय यह सोचना चाहिए कि मैं अपनी ज़िम्मेदारी की फ़िक्र करूँ जिसका मुझसे हिसाब लिया जाना है। जहाँ तक अमीर की ज़्यादती का मामला है तो इस सिलसले में वो ख़ुद ही अल्लाह के यहाँ जवाबदेह होगा। उसे यह भी यक़ीन होना चाहिए कि अल्लाह के यहाँ हर किसी के साथ ज़्यादती की तलाफ़ी भी कर दी जायेगी।

इस सूरत की आख़री आयात में जमाती ज़िन्दगी से मुताल्लिक़ बहुत अहम हिदायात दी गई हैं। इन आयात पर मुश्तमिल एक अहम दर्स हमारे "मुताअला क़ुरान हकीम के मुन्तख़ब निसाब 2" में शामिल है। "मुन्तख़ब निसाब 2" के मौज़ूआत जमाती ज़िन्दगी और उसके मामलात व मसाईल से ही मुताल्लिक़ हैं। ज़ाहिर है इक़ामत-ए-दीन का काम इन्फ़रादी तौर पर तो हो नहीं सकता। इसके लिए एक जमात या तन्ज़ीम की तश्कील तो बहरहाल नागुज़ीर है। क़ुरान ने ऐसी जमात को "हिज़बुल्लाह" का नाम दिया है और उसकी कामयाबी की ज़मानत भी दी है: { فَاِنَّ حِزْبَ اللّٰہِ ھُمُ الْغٰلِبُوْنَ } (मायदा 56) हदीस में भी इस बारे में يَدُ اللّٰہِ عَلَى الْجَمَاعَةِ[14] की ख़ुशखबरी दी गई है कि जमात के ऊपर अल्लह का हाथ है। यानि जमात को अल्लाह तआला की ताईद और नुसरत हासिल है।

जैसे अक़ामते दीन के लिए जमात का क़याम नागुज़ीर है इसी तरह जमात के लिए नज़्म और डिसिप्लीन भी ज़रूरी है और डिसिप्लीन के लिए क़वाइद व ज़वाबित की पाबंदी भी लाज़मी है। फिर जमात के अन्दर पैदा होने वाले मसाइल के तदारक व हल के लिए कुछ तदाबीर इख़्तियार करने की ज़रूरत है। चुनाँचे इन सब उमूर से मुताल्लिक़ रहनुमाई के लिए अगर हम क़ुरान से रुजूअ करें तो मुख़्तलिफ़ मक़ामात पर हमें बड़ी उम्दा रहनुमाई मिलती है। ऐसे ही मक़ामात से आयात का इंतख़ाब करके मुन्तखब निसाब (2) मुरत्तब किया गया है।[15]

وَاِنْ تُطِيْعُوْهُ تَهْتَدُوْا ۭ وَمَا عَلَي الرَّسُوْلِ اِلَّا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ـــ54

"और अगर तुम उनकी इताअत पर कारबंद रहोगे तो तभी तुम हिदायत याफ़्ता होगे। और (हमारे) रसूल ﷺ पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है सिवाय साफ़-साफ़ पहुँचा देने के।"

अगली आयत को "आयत-ए-इस्तख़लाफ़" का नाम दिया गया है। यह एक तवील आयत है और क़ुरान की अज़ीम-तरीन आयात में से है।

आयत 55

وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ

"अल्लाह का वादा है तुममें से उन लोगों के साथ जो ईमान लायें और नेक अमल करें"

यह वादा महज़ मौरूसी और नाम के मुसलमानों के लिए नहीं है, जो अल्लाह के अहकाम की कुल्ली तामील को अपना शआर बनाने और उसके रास्ते में

जान व माल की क़ुर्बानी देने के लए संजीदा ना हों, बल्कि यह वादा तो उन मोमिनीने सादिक़ीन के लिए है जो ईमान और अमल-ए-सालेह की शराइत पूरी करें। यानि जो ईमाने हक़ीक़ी के तमाम तक़ाज़ों को पूरा करने के लिए हर वक़्त कमरबस्ता रहते हों।

لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِي الْاَرْضِ كَمَا اسْتَخْلَفَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ

"कि वो ज़रूर उन्हें ज़मीन में ख़िलाफ़त (ग़लबा) अता करेगा, जैसे उसने इनसे पहले वालों को ख़िलाफ़त अता की थी।"

यानि ऐ उम्मते मुहम्मद ﷺ! अगर तुम लोग ईमाने हक़ीक़ी और आमाले सालेह की दो शर्तें पूरी करोगे तो अल्लाह तआला तुम्हें ज़मीन में इसी तरह गलबा और इक़्तदार अता करेगा जिस तरह इससे पहले उसने हज़रत तालूत, हज़रत दाऊद और हज़रत सुलेमान अलै. को ख़िलाफ़त अता की थी या हज़रत सुलेमान अलै. के बाद बनी इस्राईल को मक्काबी सल्तनत की सूरत में इक़्तदार अता किया था। इस आयत में ख़िलाफ़त के वादे को तीन मुख्तलिफ़ अंदाज़ में बयान किया गया है। अव्वल तो यह ताकीदी वादा है कि अल्लाह लाज़िमन मुसलमानों को भी ख़िलाफ़त अता फ़रमायेगा जैसे उसने साबक़ा उम्मत के अहले ईमान को ख़िलाफ़त अता की थी। फिर फ़रमाया:

وَلَيُمَكِّنَنَّ لَهُمْ دِيْنَهُمُ الَّذِي ارْتَضٰى لَهُمْ

"और वो ज़रूर इनके उस दीन को ग़लबा अता करेगा जो उनके लिए उसने पसंद किया है"

अल्लाह तआला अपने पसंदीदा दीन को लाज़िमन ग़ालिब करेगा। ज़ाहिर बात है कि जहाँ मुसलमानों की ख़िलाफ़त होगी वहाँ लाज़िमन अल्लाह के दीन का ग़लबा होगा और अगर किसी हुकूमत में अल्लाह का दीन ग़ालिब होगा तो वो लाज़िमन मुसलमानों ही की ख़िलाफ़त होगी। गोया बुनियादी तौर पर तो यह एक ही बात है, लेकिन सिर्फ़ ख़िलाफ़त की अहमियत उजागर करने के लिए पहली बात को यहाँ दूसरे अंदाज़ मे दोहराया गया है। अलबत्ता यहाँ उस दीन का ख़ुसूसी तौर पर ज़िक्र किया गया है जो अल्लाह ने मुस्लमानों के लिए पसंद फ़रमाया है। सूरह मायदा की आयत 3 में बाक़ायदा नाम लेकर बताया गया है कि अल्लाह ने तुम्हारे लिए दीन इस्लाम को पसंद फ़रमाया है: {اَلْيَوْمَ اَ كْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا ۚ } "आज के दिन मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन की तकमील फ़रमा दी है, और तुम पर अपनी नेअमत का इत्माम फ़रमा दिया है, और तुम्हारे लिए मैंने पसंद कर लिया है इस्लाम को ब-हैसियत दीन के।" बहरहाल दूसरी बात यहाँ यह बताई गई कि ख़िलाफ़त मिलेगी तो उसके नतीजे के तौर पर अल्लाह का दीन लाज़िमन ग़ालिब होगा और तीसरी बात:

وَلَيُبَدِّلَنَّهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ خَوْفِهِمْ اَمْنًا ۭ

"और वो उनकी (मौजूदा) ख़ौफ़ की हालत के बाद उसको लाज़िमन अमन से बदल देगा।"

यह उस कैफ़ियत की तरफ इशारा है जो हिजरत के फ़ौरन बाद के ज़माने में मुसलमानों पर तारी थी। उस ज़माने में मदीने के अंदर मुसलसल इमरजेंसी की सी हालत थी। फ़लाँ क़बीले की तरफ़ से हमले का ख़तरा है! फ़लाँ क़बीला

जंग की तैयारियों में मसरूफ़ है! कल क़ुरैश मक्का की तरफ़ से एक ख़ौफ़नाक साज़िश की ख़बर पहुँची थी! आज अबु आमिर राहिब के एक शैतानी मन्सूबे की इत्तलाअ आँ पहुँची है! ग़र्ज़ हिजरत के बाद पाँच साल तक मुसलमान मुसलसल एक ख़ौफ़ की कैफ़ियत में ज़िन्दगी बसर करने पर मजबूर रहे। इस सूरते हाल में उन्हें ख़ुशख़बरी सुनाई जा रही है कि अब ख़ौफ़ की वो कैफ़ियत अमन से बदलने वाली है।

तीनों वादों के बारे में एक अहम नुक्ता यह है कि यहाँ बार-बार हर्फ़े ताकीद इस्तेमाल हुए हैं। तीनों अफ़आल में मुज़ारेअ से पहले लाम मफ़तूह और बाद में "नून" मुशद्दद आया है, गोया तीनों वादे निहायत ताकीदी वादे हैं।

يَعْبُدُوْنَنِيْ لَا يُشْرِكُوْنَ بِيْ شَيْـــًٔا ۭ

"वो मेरी ही इबादत करेंगे और मेरे साथ किसी चीज़ को शरीक नहीं ठहरायेंगे।"

मेरे नज़दीक यह हुक्म मुस्तक़बिल से मुताल्लिक़ है। यानि जब मेरा दीन ग़ालिब आ जायेगा तो फिर मुसलमान ख़ालिस मेरी बंदगी करेंगे और किसी क़िस्म का शिर्क ग़वारा नहीं करेंगे। इसका मतलब यह है कि जब तक अल्लाह की हुकूमत क़ायम नहीं होगी तो मआशरा शिर्क से कुल्ली तौर पर पाक नही हो सकेगा। जैसे हम पाकिस्तान के मुसलमान शहरी आज क़ौमी और इज्तमाई ऐतबार से कुफ़्र व शिर्क के माहौल में ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं। आज अगर हम सब इंफ़रादी तौर पर अपने ज़ाती अक़ायद बिल्कुल दुरुस्त भी कर लें और अपने आपको तमाम मुशरिकाना अवहाम से पाक करके अक़ीदा-ए-तौहीद को रासुख भी कर लें तो भी हम ख़ुद को शिर्क से कुल्ली तौर पर पाक करने का दावा नहीं कर सकते। यानि जब तक मुल्क में अल्लाह का क़ानून नाफ़िज़ और अल्लाह का दीन अमली तौर पर ग़ालिब नहीं हो जाता और जब तक मुल्क में दूसरे क़वानीन के बजाय अल्लाह के क़ानून की बालादस्ती क़ायम नहीं हो जाती उस वक़्त तक उस मुल्क के शहरी होने के ऐतबार से हम कुफ़्र और शिर्क की इज्तमाइयत में बराबर के शरीक रहेंगे। चुनाँचे किसी मुल्क या इलाक़े में अमलन तौहीद की तकमील उस वक़्त होगी जब अल्लाह के फ़रमान के मुताबिक़ दीन कुल का कुल अल्लाह के लिए हो जायेगा: {وَّيَكُوْنَ الدِّيْنُ كُلُّهٗ لِلّٰهِ} (अन्फ़ाल:39)

وَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ 55

"और जो उसके बाद भी कुफ़्र करे तो ऐसे लोग ही फ़ासिक़ हैं।"

इसका एक मफ़हूम तो यह है कि दीन के ग़लबे के माहौल में भी जो शख़्स कुफ़्र करेगा तो उसके अंदर गोया ख़ैर का माद्दा सिरे से है ही नहीं। दूसरा मफ़हूम यह है कि बातिल के ग़लबे में किसी शख़्स का ईमान लाना, उस पर क़ायम रहना और उसके मुताबिक़ अमल करना इंतहाई मुश्किल है, लेकिन जब दीन ग़ालिब हो जाये और सारी रुकावटें दूर हो जायें तो उसके बाद सिर्फ़ वही शख़्स दीन से दूर रहेगा जिसकी फ़ितरत ही बुनियादी तौर पर मस्ख हो चुकी है।

इन दो मफ़ाहीम के अलावा मेरे नज़दीक इस फ़िकरे का एक तीसरा मफ़हूम भी है और उस मफ़हूम के मुताबिक़ "بَعْدَ ذٰلِكَ" के अल्फ़ाज़ का ताल्लुक़ मज़कूरा तीन वादों से है, कि जब अल्लाह ने वादा किया है कि वो लाज़िमन तुम्हें ख़िलाफ़त से नवाज़ेगा, वो लाज़िमन तुम्हारे दीन को ग़ालिब करेगा

और वो लाज़िमन तुम्हारे ख़ौफ़ की कैफ़ियत को अमन से बदल देगा तो उसके बाद भी जो शख़्स कमर-ए-हिम्मत ना बाँधे और इक़ामते दीन की जद्दो-जहद के लिए उठ खड़ा ना हो तो उसे गोया हमारे वादों पर यक़ीन नहीं और वो अमली तौर पर हमारे इन अहकाम से कुफ़्र का मुरतकिब हो रहा है!

यह आयत 6 हिजरी में नाज़िल हुई और इसके नुज़ूल के फौरन बाद ही इसके मिस्दाक़ का ज़हूर शुरु हो गया। 7 हिजरी में सुलह हुदैबिया तय पा गई जिसे ख़ुद अल्लाह तआला ने हुज़ूर ﷺ के लिए "फ़तहे मुबीन" क़रार दिया: {اِنَّا فَتَحْنَا لَكَ فَتْحًا مُّبِيْنًا} (सूरह फ़तह:1)। सुलह हुदैबिया के फौरन बाद 7 हिजरी में ही ख़ैबर फ़तह हुआ, जिसके नतीजे में मुसलमानों को अल्लाह तआला ने कसरत से माले ग़नीमत अता किया। 8 हिजरी में मक्का फ़तह हो गया। 9 हिजरी को हज के मौक़े पर operation mopping up का ऐलान कर दिया गया। इस ऐलान के मुताबिक़ आइंदा के लिए मस्जिद हराम के अंदर मुशरिकीन का दाखिला ममनूअ क़रार दे दिया गया। जज़ीरा नुमाए अरब के तमाम मुशरिकीन को मीआदी मुआहिदों की सूरत में इख़्तताम-ए-मुआहिदा तक और अमूमी तौर पर चार माह की मोहलत दे दी गई, और इसके साथ ही वाज़ेह हुक्म दे दिया गया कि इस मुद्दते मोहलत में अगर वो इस्लाम क़ुबूल नहीं करेंगे तो सबके सब क़त्ल कर दिए जायेंगे। यूँ 10 हिजरी तक जज़ीरा नुमाए अरब में अल्लाह का दीन ग़ालिब हो गया, अल्लाह की हुकूमत क़ायम हो गई और हज़रत दाऊद अलै. की तरह मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ भी अल्लाह के ख़लीफ़ा बन गये।

हुज़ूर ﷺ के बाद ख़िलाफ़ते राशिदा क़ायम हुई और फिर उसके बाद रफ्ता-रफ्ता हालात में बिगाड़ आना शुरु हो गया जो मुसलसल जारी है। सूरह अंबिया के आख़री रुकूअ के मुताअले के दौरान मैंने हज़रत नौमान बिन बशीर रज़ि. से मरवी एक हदीस बयान की थी जिसमें उम्मते मुस्लिमा के क़यामत तक के हालात की वाज़ेह तफ़सील मिलती है। ज़ेरे मुताअला आयत के मज़मून के स्याक़ व सबाक़ में आप ﷺ का यह फ़रमान बहुत अहम है, लिहाज़ा हम उसका एक बार फिर मुताअला कर लेते हैं। हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया: ((تَكُوْنُ النُّبُوَّةُ فِيْكُمْ مَاشَاءَ اللهُ اَنْ تَكُوْنَ)) "तुम्हारे दरमियान नबुवत मौजूद रहेगी जब तक अल्लाह चाहेगा कि वह रहे।" यानि जब तक अल्लाह चाहेगा मैं ब-नफ़्से नफ़ीस तुम्हारे दरमियान मौजूद रहूँगा। ((ثُمَّ يَرْفَعُهَا اِذَا شَاءَ اَنْ يَّرْفَعَهَا)) "फिर अल्लाह उसको उठा लेगा जब उसे उठाना चाहेगा।" यानि जब अल्लाह चाहेगा मेरा इन्तेक़ाल हो जायेगा और यूँ यह दौर ख़त्म हो जायेगा। ((ثُمَّ تَكُوْنُ خِلَافَةٌ عَلٰى مِنْهَاجِ النُّبُوَّةِ)) "फिर ख़िलाफ़त होगी नबुवत के नक़्से क़दम पर।" यानि मेरे क़ायम कर्दा निज़ाम के मुताबिक़ ख़िलाफ़त अला मिन्हाजन्न नुबुवह के ज़रिए यह निज़ाम एक बाल के फ़र्क़ के बग़ैर ज्यों का त्यों क़ायम रहेगा। ((فَتَكُوْنُ مَا شَاءَ اللهُ اَنْ تَكُوْنَ)) "फिर यह दौर भी रहेगा जब तक अल्लाह चाहेगा कि रहे।" ((ثُمَّ يَرْفَعُهَا اِذَا شَاءَ اللهُ اَنْ يَّرْفَعَهَا)) "फिर इस दौर को भी उठा लेगा जब उठाना चाहेगा।" ((ثُمَّ تَكُوْنُ مُلْكًا عَاضًّا)) "फिर काट खाने वाले ज़ालिम मलूकियत होगी।" ((فَيَكُوْنُ مَا شَاءَ اللهُ اَنْ يَكُوْنَ)) "पस यह दौर भी रहेगा जब तक अल्लाह चाहेगा।" ((ثُمَّ يَرْفَعُهَا اِذَا شَاءَ اَنْ يَّرْفَعَهَا)) "फिर इसको भी अल्लाह उठा लेगा जब उठाना चाहेगा।" ((ثُمَّ تَكُوْنُ مُلْكًا جَبْرِيَّةً)) "फिर ग़ुलामी की मलूकियत का दौर आयेगा।" यह चौथा दौर हमारा दौर है। तीसरे दौर की मलूकियत में सबके सब हुक्मरान (बनु उमैय्या, बनु अब्बास और

तुर्क बादशाह) मुसलमान थे। उनमें अच्छे भी थे और बुरे भी मगर सब कलमा गोह थे, जबकि चौथे दौर की मलूकियत में मुख़्तलिफ़ मुसलमान मुमालिक ग़ैर-मुस्लिमों के गुलाम हो गये। कहीं मुसलमान ताज-ए-बरतानिया की रिआया बन गये, कहीं वलन्दीज़ियों के तसल्लुत में आ गये और कहीं फ्राँसीसियों के गुमाम बन गये। इस तरह पूरा आलम-ए-इस्लाम ग़ैर मुस्लिमों के ज़ेरे तसल्लुत आ गया।

इक्कीसवीं सदी का मौजूदा दौर आलमे इस्लाम के लिए "मुल्कन जब्रिय्यन" का ही तसलसुल है। अग़रचे मुस्लिम मुमालिक पर से ग़ैर-मुल्की क़ब्ज़ा बज़ाहिर ख़त्म हो चुका है और इन मुमालिक पर क़ाबिज़ अक़वाम की बराहे रास्त हुकूमतों की बिसात लपेट दी गई है लेकिन अमली तौर पर ये तमाम मुमालिक अब भी उनके क़ब्ज़े में हैं। इस्तअमारी क़ुव्वतें आज भी रिमोट कन्ट्रोल इक़्तदार के ज़रिए इन मुमालिक के मामलात सभाँले हुए हैं। वर्ल्ड बैंक, आई.एम.एफ, और दूसरे बहुत से इदारे उनके मोहरों के तौर पर काम कर रहे हैं और यूँ वो अपने मालियाती इस्तअमार को अब भी क़ायम रखे हुए हैं।

उसके बाद हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया कि यह चौथा दौर भी ख़त्म हो जायेगा: ((ثُمَّ يَرْفَعُهَا اِذَا شَاءَ اَنْ يَّرْفَعَهَا)) "फिर अल्लाह इसे भी उठा लेगा जब उठाना चाहेगा।" और फिर उम्मत को एक बहुत बड़ी ख़ुशखबरी देते हुए आप ﷺ ने फ़रमाया: ((ثُمَّ تَكُوْنُ خِلَافَةً عَلٰی مِنْهَاجِ النُّبُوَّةِ)) "इसके बाद फिर ख़िलाफ़त अला मिन्हाजन्न नबुवह का दौर आयेगा।" यह ख़ुशखबरी सुनाने के बाद रावी कहते हैं: ثُمَّ سَکَتَ "फिर रसूल अल्लाह ﷺ ख़ामोश हो गये।" आप ﷺ शायद इसलिए ख़ामोश हो गये कि उसके बाद दुनिया के खात्मे का मामला था।

इसके अलावा हम हज़रत सौबान रज़ि. से मरवी यह हदीस भी पढ़ आये हैं जिसमें यह वज़ाहत भी मिलती है कि ख़िलाफ़त अला मिन्हाजन्न नबूवह का निज़ाम तमाम रुए अर्ज़ी के लिए होगा। हज़रत सौबान रज़ि. (हुज़ूर ﷺ के आज़ाद कर्दा गुलाम) रिवायत करते हैं कि रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: ((اِنَّ اللّٰهَ زَوٰی لِیَ الْاَرْضَ)) "अल्लाह ने मेरे लिए तमाम ज़मीन को लपेट दिया।" ((فَرَاَيْتُ مَشَارِقَهَا وَمَغَارِبَهَا)) "तो मैंने उसके सारे मशरिक़ और मग़रिब देख लिए।" ((وَاِنَّ اُمَّتِیْ سَيَبْلُغُ مُلْكُهَا مَا زُوِیَ لِیْ مِنْهَا)) "और मेरी उम्मत की हुकूमत उन तमाम इलाक़ों पर क़ायम होगी जो मुझे दिखाए गये।"

इसी तरह हमने हज़रत मिक़दाद बिन असवद रज़ि. से मरवी इस हदीस का मुताअला भी किया था जिसमें हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया: "रुए अर्ज़ी पर कोई ईंट गारे का बना हुआ घर और कोई कम्बलों का बना हुआ ख़ेमा ऐसा नहीं रहेगा जिसमें दीन इस्लाम दाख़िल ना हो जाये, ख़्वाह किसी इज्ज़त वाले के ऐज़ाज़ के साथ ख़्वाह किसी मग़लूब की मग़लूबियत की सूरत में।" यानि या तो उस घर वाला इस्लाम क़ुबूल करके ऐज़ाज़ हासिल कर लेगा या फिर उसे ज़िल्लत के साथ इस्लाम की बालादस्ती क़ुबूल करना पड़ेगी। दीन के ग़लबे की सूरत में ग़ैर मुस्लिम रिआया के लिए वह उसूल है जो सूरह तौबा में इस तरह बयान हुआ: {حَتّٰي يُعْطُوا الْجِزْيَةَ عَنْ يَّدٍ وَّهُمْ صٰغِرُوْنَ} (आयत 29) यानि वो अपने हाथ से जिज़्या दें और छोटे बन कर रहें।

आने वाले इस दौर के बारे में रसूल अल्लाह ﷺ के इन फ़रमूदात के साथ-साथ इस मामले को मन्तक़ी तौर पर यूँ भी समझ लीजिए कि क़ुरान मजीद में 3 मक़ामात (तौबा:33, फ़तह:128 व सफ़:9) पर वाज़ेह अल्फ़ाज़ में ऐलान फ़रमा दिया गया है: {هُوَ الَّذِيْٓ اَرْسَلَ رَسُوْلَهٗ بِالْهُدٰي وَدِيْنِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهٗ عَلَي الدِّيْنِ كُلِّهٖ} "वही तो है जिसने

भेजा है अपने रसूल ﷺ को अल हुदा और दीने हक़ देकर ताकि ग़ालिब करदे उसे कुल के कुल दीन (निज़ामे ज़िन्दगी) पर।” इसके अलावा क़ुरान हकीम में पाँच मर्तबा हुज़ूर ﷺ की बेअसत के बारे में यह भी वाज़ेह फ़रमा दिया गया है कि आप ﷺ को पूरी नौए इंसानी के लिए रसूल बना कर भेजा गया है। इस मज़मून में सूरह सबा की यह आयत बहुत वाज़ेह और नुमायाँ है: {وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا كَاۗفَّةً لِّلنَّاسِ بَشِيْرًا وَّنَذِيْرًا وَّلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ} (आयत 28) “हमने आपको पूरी नौए इंसानी के लिए बशीर और नज़ीर बना कर भेजा है, लेकिन अक्सर लोगों को इसका इदराक नहीं है।” सूरह अंबिया में यही मज़मून एक नई शान से इस तरह आया है: {وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا رَحْمَةً لِّلْعٰلَمِيْنَ} (आयत 107) “हमने तो आपको तमाम जहानों के लिए रहमत ही बना कर भेजा है।” इन दोनों आयात का मुश्तरक मफ़हूम यही है कि हुज़ूर ﷺ की बेअसत का मक़सद तब पूरा होगा जब पूरे आलमे इंसानियत पर अल्लाह का दीन ग़ालिब होगा। चुनाँचे क़यामत से पहले तमाम रुए अर्ज़ी पर दीने हक़ का ग़लबा एक तयशुदा अम्र है।

आयत 56

وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ ؀56

“और नमाज़ क़ायम करो और ज़कात अदा करो, और रसूल ﷺ की इताअत करो ताकि तुम पर रहम किया जाये।”

यहाँ रुए सुखन मुनाफ़िक़ीन की तरफ है। जैसा की पहले बताया जा चुका है कि हुज़ूर ﷺ की शख़्सी इताअत वाला मामला उन पर बहुत शाक़ गुज़रता था और ऐसे हर हुक्म पर वो बार-बार यही कहते थे कि आप ﷺ क़ुरानी आयात के नुज़ूल के बग़ैर ही अपनी इताअत के बारे में अहकाम जारी करते रहते हैं!

आयत 57

لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مُعْجِزِيْنَ فِي الْاَرْضِ ۚ

“इन काफ़िरों की निस्बत यह गुमान ना करों कि वह ज़मीन में अल्लाह को आजिज़ कर देंगे।”

इनके मुताल्लिक़ किसी को यह ग़लतफ़हमी ना रहे कि यह ज़मीन में अल्लाह के क़ाबू से बहार निकाल जाएँगे।

وَمَاْوٰىهُمُ النَّارُ ۭ وَلَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ؀57

“और इनका ठिकाना आग है, और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है।”

आयात 58 से 61 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لِيَسْتَاْذِنْكُمُ الَّذِيْنَ مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ وَالَّذِيْنَ لَمْ يَبْلُغُوا الْحُلُمَ مِنْكُمْ ثَلٰثَ مَرّٰتٍ ۭ مِنْ قَبْلِ صَلٰوةِ الْفَجْرِ وَحِيْنَ تَضَعُوْنَ ثِيَابَكُمْ مِّنَ الظَّهِيْرَةِ وَمِنْۢ بَعْدِ صَلٰوةِ الْعِشَاۗءِ ڜ ثَلٰثُ عَوْرٰتٍ لَّكُمْ ۭ لَيْسَ عَلَيْكُمْ وَلَا عَلَيْهِمْ جُنَاحٌۢ بَعْدَهُنَّ ۭ طَوّٰفُوْنَ عَلَيْكُمْ بَعْضُكُمْ عَلٰي بَعْضٍ ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيٰتِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ؀58 وَاِذَا بَلَغَ الْاَطْفَالُ مِنْكُمُ الْحُلُمَ فَلْيَسْتَاْذِنُوْا كَمَا اسْتَاْذَنَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ؀59 وَالْقَوَاعِدُ مِنَ النِّسَاۗءِ الّٰتِيْ لَا يَرْجُوْنَ نِكَاحًا فَلَيْسَ عَلَيْهِنَّ جُنَاحٌ اَنْ يَّضَعْنَ ثِيَابَهُنَّ غَيْرَ مُتَبَرِّجٰتٍۢ بِزِيْنَةٍ ۭ وَاَنْ يَّسْتَعْفِفْنَ خَيْرٌ لَّهُنَّ ۭ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ؀60 لَيْسَ عَلَي الْاَعْمٰى حَرَجٌ وَّلَا عَلَي الْاَعْرَجِ حَرَجٌ وَّلَا عَلَي الْمَرِيْضِ حَرَجٌ وَّلَا عَلٰٓي اَنْفُسِكُمْ اَنْ تَاْكُلُوْا مِنْۢ بُيُوْتِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اٰبَاۗىِٕكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اُمَّهٰتِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اِخْوَانِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اَخَوٰتِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اَعْمَامِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ عَمّٰتِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اَخْوَالِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ خٰلٰتِكُمْ اَوْ مَا مَلَكْتُمْ مَّفَاتِحَهٗٓ اَوْ صَدِيْقِكُمْ ۭ لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَاْكُلُوْا جَمِيْعًا اَوْ اَشْتَاتًا ۭ فَاِذَا دَخَلْتُمْ بُيُوْتًا فَسَلِّمُوْا عَلٰٓي اَنْفُسِكُمْ تَحِيَّةً مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُبٰرَكَةً طَيِّبَةً ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ ؀61

अब सूरत के आख़िर में मआशरती व समाजी मामलात के बारे में दोबारा कुछ हिदायात दी जा रही हैं। मज़ामीन की तरतीब के ऐतबार से इस सूरत की मिसाल एक ऐसे ख़ूबसूरत हार की सी है जिसके दरमियान में एक बहुत बड़ा हीरा है और उसके दोनों ऐतराफ़ में मोती जड़े हुए हैं। सूरत का पाँचवा (आयत 35 से शुरू) रुकूअ (जो इसका वसती रुकूअ है) इस तरह शुरु होता है: {اَللّٰهُ نُوْرُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ مَثَلُ نُوْرِهٖ كَمِشْكٰوةٍ فِيْهَا مِصْبَاحٌ ۭ اَلْمِصْبَاحُ فِيْ زُجَاجَةٍ ۭ}। यह इस सूरत की आयत 35 है जो सूरत के तक़रीबन वस्त में कोहिनूर हीरे की मानिंद है और इसके दोनों ऐतराफ़ में मआशरती व समाजी अहकाम मोतियों की तरह जड़े हुए हैं। उनमें से कुछ अहकाम पहले चार रुकुआत में हैं और कुछ आख़री चार रुकुआत में।

आयत 58

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لِيَسْتَاْذِنْكُمُ الَّذِيْنَ مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ

"ऐ ईमान वालो! चाहिए कि तुमसे इजाज़त लिया करें तुम्हारे गुलाम और लौंडियाँ"

وَالَّذِيْنَ لَمْ يَبْلُغُوا الْحُلُمَ مِنْكُمْ ثَلٰثَ مَرّٰتٍ ۭ

"और तम्हारे वो बच्चे भी जो अभी बलूगत की उम्र को नहीं पहुँचे, तीन अवक़ात में।"

दिन-रात में तीन अवक़ात तुम्हारी खल्वत (privacy) के अवक़ात हैं। इन अवक़ात में तुम्हारे गुलाम, बांदियाँ और बच्चे भी बिला इजाज़त तुम्हारी खल्वत में मख़ल ना हों। इन अवक़ात की तफ़सील यह है:

مِنْ قَبْلِ صَلٰوةِ الْفَجْرِ وَحِيْنَ تَضَعُوْنَ ثِيَابَكُمْ مِّنَ الظَّهِيْرَةِ

"फ़ज्र की नमाज़ से पहले, और जब तुम अपने कपड़े उतार देते हो दोपहर के वक़्त"

وَمِنْۢ بَعْدِ صَلٰوةِ الْعِشَاۗءِ ڜ

"और इशा की नमाज़ के बाद।"

ثَلٰثُ عَوْرٰتٍ لَّكُمْ ۭ

"यह तीन अवक़ात तुम्हारे पर्दे के हैं।"

यानि यह तुम्हारी खल्वत (privacy) के अवक़ात हैं। इन अवक़ात में तुम्हारे ख़ादिमों और तुम्हारे बच्चों का अचानक तुम्हारे पास आ जाना मुनासिब नहीं, लिहाज़ा उन्हें यह हिदायत कर दी जाये कि वो इन अवक़ात में तुम्हारी खल्वत की जगह आने लगें तो पहले इजाज़त ले लिया करें।

لَيْسَ عَلَيْكُمْ وَلَا عَلَيْهِمْ جُنَاحٌۢ بَعْدَهُنَّ ۭ

"इन अवक़ात के बाद (वो बिला इजाज़त आयें तो) तुम पर और उन पर कोई हर्ज नहीं।"

यानि इन अवक़ात के अलावा तुम्हारे गुलाम, बांदियाँ या बच्चे अगर तुम्हारे पास बगैर इजाज़त आयें-जायें तो इसमें कोई हर्ज नहीं है।

طَوّٰفُوْنَ عَلَيْكُمْ بَعْضُكُمْ عَلٰي بَعْضٍ ۭ

"तुम एक-दूसरे के पास फिरते-फिराते ही रहते हो।"

यानि घर के अंदर इधर-उधर मुख़्तलिफ़ कामों के लिये मुख़्तलिफ़ अफ़राद को वक़्तन-फ़-वक़्तन आना-जाना होता है। इस तरह की आमद व रफ़्त पर इन ख़ास अवक़ात के अलावा कोई पाबंदी नहीं है।

كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيٰتِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ـ58

"इसी तरह अल्लाह वाज़ेह करता है तुम्हारे लिए अपनी आयात। और अल्लाह अलीम है, हकीम है।"

आयत 59

وَاِذَا بَلَغَ الْاَطْفَالُ مِنْكُمُ الْحُلُمَ فَلْيَسْتَاْذِنُوْاكَمَا اسْتَاْذَنَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۭ

"और जब तुम्हारे बच्चे बलूगत की उम्र को पहुँच जायें तो चाहिए कि वो भी इजाज़त लें जैसे उनसे पहले लोग इजाज़त लेते हैं।"

घरों में दाख़ले के आदाब के सिलसले में एक अमूमी हुक्म इससे पहले (इस सूरह की आयत 27 में) नाज़िल हो चुका है। तुम्हारे बच्चे जब बालिग़ हो जायें तो भी इस हुक्म की तामील करें।

كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ـ59

"इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिए अपनी आयात की वज़ाहत करता है। और अल्लाह अलीम है, हकीम है।"

आयत 60

وَالْقَوَاعِدُ مِنَ النِّسَاۗءِ الّٰتِيْ لَا يَرْجُوْنَ نِكَاحًا

"और (घरों में) बैठ रहने वाली औरतें जो अब निकाह की उम्मीदवार ना हों"

जिन औरतों की निकाह करने की उम्र ना रही हो और वो मुअम्मर (बूढ़ी) हो चुकी हों।

فَلَيْسَ عَلَيْهِنَّ جُنَاحٌ اَنْ يَّضَعْنَ ثِيَابَهُنَّ

"तो उन पर कोई हर्ज नहीं अगर वो अपने (इज़ाफ़ी) कपड़े उतार दिया करें।"

यानि ऐसी औरतों के लिए ज़रुरी नहीं कि वो बड़ी चादर ही ओढ़ कर घर से बाहर निकलें। इसी तरह घर के अंदर बैठे हुए उन पर जवान औरतों की तरह हर वक़्त दुपट्टे ओढ़े रखने की पाबन्दी नहीं है।

غَيْرَ مُتَبَرِّجٰتٍۢ بِزِيْنَةٍ ۭ

"बशर्ते कि ज़ीनत की नुमाईश करने वाली ना हों।"

अपनी चादरें उतार कर रख देने से उनकी नीयत दूसरों पर अपनी ज़ीनत ज़ाहिर करने की ना हो और ना वो बज़ाहिर ऐसा करें।

وَاَنْ يَّسْتَعْفِفْنَ خَيْرٌ لَّهُنَّ ۭ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ـ60

"और अगर वो इस मामले में अहतियात ही करें तो यह उनके लिए बेहतर है। और

अल्लाह सब कुछ सुनने वाला, हर चीज़ का जानने वाला है।"

उनके सन रसीदा होने की वजह से उन्हें जो रिआयत दी जा रही है अगर वो इस रिआयत से फ़ायदा ना उठायें और अपने कपड़ों के बारे में हत्तल वसअ अहतियात ही करें तो यह उनके लिए बेहतर है, क्योंकि शैतान तो हर वक़्त इंसान की ताक में रहता है। क्या ख़बर किस वक़्त वो कोई फ़ितना खड़ा कर दे।

आयत 61

لَيْسَ عَلَي الْاَعْمٰى حَرَجٌ

"किसी अंधे पर कोई तंगी नहीं"

यहाँ पर उस सवाल का जवाब दिया जा रहा है कि अगर किसी ख़ानदान, घर या बिरादरी में कोई माज़ूर शख़्स हो जो माज़ूरी के सबब अपनी आज़ाद मआश का अहल ना हो तो ऐसे शख़्स के लिए शरीअत की इन पाबंदियों के बारे में क्या हुक्म होगा? चुनाँचे ऐसे लोगों के बारे में यहाँ वाज़ेह तौर पर बताया गया कि अगर वो तुम्हारे घरों में रहें तो इसमें मज़ायका (अंतर) नहीं।

وَّلَا عَلَي الْاَعْرَجِ حَرَجٌ وَّلَا عَلَي الْمَرِيْضِ حَرَجٌ وَّلَا عَلٰٓي اَنْفُسِكُمْ

"और ना किसी लंगड़े पर कोई तंगी है और ना किसी मरीज़ पर कोई तंगी है, और ना जो ख़ुद तुम्हारे अपने ऊपर (इस ज़िमन में) कोई तंगी है"

اَنْ تَاْكُلُوْا مِنْۢ بُيُوْتِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اٰبَاۗىِٕكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اُمَّهٰتِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اِخْوَانِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اَخَوٰتِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اَعْمَامِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ عَمّٰتِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ اَخْوَالِكُمْ اَوْ بُيُوْتِ خٰلٰتِكُمْ

"कि तुम खाना खाया करो अपने घरों से, या अपने बापों के घरों से, या अपनी माओं के घरों से, या अपने भाईयों के घरों से, या अपनी बहनों के घरों से, या अपने चचाओं के घरों से, या अपनी फूफियों के घरों से, या अपने मामुओं के घरों से, या अपनी खालाओं के घरों से"

اَوْ مَا مَلَكْتُمْ مَّفَاتِحَهٗٓ اَوْ صَدِيْقِكُمْ ۭ

"या (ऐसे घरों से) जिनकी चाबियाँ तुम्हारे पास हों या अपने दोस्तों के घरों से।"

जैसे कोई कारखाना हो और उसके मालिक के पास उसकी चाबियाँ हों, वो जब चाहे वहाँ जाये और बैठ कर खाये-पिये।

لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَاْكُلُوْا جَمِيْعًا اَوْ اَشْتَاتًا ۭ

"तुम्हारे ऊपर कोई हर्ज नहीं कि तुम सब मिल कर खाओ या अलग-अलग।"

बाज़ लोगों ने इन अल्फ़ाज़ से ख़्वाह-म-ख्वाह यह मफ़हूम निकालने की कोशिश की है कि यहाँ मर्दों और औरतों को इकट्ठे खाने की इजाज़त दी गई

है। दरअसल यह मजलिसी अहकाम हैं और ख़ुसूसी तौर पर इस हुक्म में ऐसी सूरतेहाल मुराद है जिसमें कुछ लोग खाने की जगह पर पहुँच जाते हैं जबकि बाज़ दूसरे लोग अभी नहीं पहुँचते और पहले आने वालों को इससे सख़्त तकलीफ़ का सामना करना पड़ता है। इसलिए ऐसी सूरत में इजाज़त दी गई है कि जैसे सहूलत हो वैसे खा-पी लिया जाये, सबका इकट्ठे खाना ही ज़रूरी नहीं है। अलग-अलग गिरोहों में भी खाना खाया जा सकता है और अलग-अलग अफ़राद भी खा सकते हैं। इसमें ख़्वाह-म-ख़्वाह तकल्लुफ़ या तकलीफ़ की ज़रूरत नहीं है। इन मजलिसी अहकाम से ऐसा मफ़हूम निकालने की कोशिश करना सरासर ज़्यादती है कि यहाँ सतर-ए-हिजाब के अहकाम भी नऊज़ुबिल्लाह मौअत्तल कर दिये गये हैं और खाने-पीने की मख्लूत पार्टियों की इजाज़त दे दी गई है। मआज़ अल्लाह!

فَاِذَا دَخَلْتُمْ بُيُوْتًا فَسَلِّمُوْا عَلٰٓي اَنْفُسِكُمْ

"तो जब तुम घरों में दाख़िल हो तो अपने (लोगों) पर सलाम भेजा करो"

यानि जिस घर में तुम बतौर मेहमान जा रहे हो उसमें मौजूद लोग तुम्हारे अपने ही लोग हैं, वो तुम्हारे अज़ीज़ और रिश्तेदार हैं। चुनाँचे तुम अपने इन लोगों को ज़रूर "अस्सलामु अलैकुम" कहा करो। ख़ुद अपने घर में भी दाख़िल हो तो "अस्सलामु अलैकुम" कहा करो।

تَحِيَّةً مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُبٰرَكَةً طَيِّبَةً ۭ

"यह दुआ है अल्लाह की तरफ़ से मुबारक भी और पाक भी।"

"अस्सलामु अलैकुम" एक ऐसी बा-बरकत और पाकीज़ा दुआ है जो ऐसे मौक़ों के लिए अल्लाह तआला ने तुम लोगों को ख़ुसूसी तौर पर सिखाई है।

كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ ۝ۧ61

"इसी तरह अल्लाह तुम्हारे लिए अपनी आयात वाज़ेह कर रहा है ताकि तुम लोग अक़्ल से काम लो।"

आयात 62 से 64 तक

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَاِذَا كَانُوْا مَعَهٗ عَلٰٓي اَمْرٍ جَامِعٍ لَّمْ يَذْهَبُوْا حَتّٰى يَسْتَاْذِنُوْهُ ۭ اِنَّ الَّذِيْنَ يَسْتَاْذِنُوْنَكَ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ
وَرَسُوْلِهٖ ۚ فَاِذَا اسْتَاْذَنُوْكَ لِبَعْضِ شَاْنِهِمْ فَاْذَنْ لِّمَنْ شِئْتَ مِنْهُمْ وَاسْتَغْفِرْ لَهُمُ اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝62 لَا تَجْعَلُوْا دُعَاۗءَ الرَّسُوْلِ بَيْنَكُمْ كَدُعَاۗءِ
بَعْضِكُمْ بَعْضًا ۭ قَدْ يَعْلَمُ اللّٰهُ الَّذِيْنَ يَتَسَلَّلُوْنَ مِنْكُمْ لِوَاذًا ۚ فَلْيَحْذَرِ الَّذِيْنَ يُخَالِفُوْنَ عَنْ اَمْرِهٖٓ اَنْ تُصِيْبَهُمْ فِتْنَةٌ اَوْ يُصِيْبَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝63 اَلَآ اِنَّ
لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ قَدْ يَعْلَمُ مَآ اَنْتُمْ عَلَيْهِ ۭ وَيَوْمَ يُرْجَعُوْنَ اِلَيْهِ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا عَمِلُوْا ۭ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝64

आख़री रुकूअ जो सिर्फ़ तीन आयात पर मुश्तमिल है, इसमें ख़ालिस जमाती ज़िन्दगी से मुताल्लिक़ अहकाम हैं।

आयत 62

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ

"मोमिन तो सिर्फ़ वही हैं जो ईमान लाये अल्लाह पर और उसके रसूल ﷺ पर"

وَاِذَا كَانُوْا مَعَهٗ عَلٰٓي اَمْرٍ جَامِعٍ لَّمْ يَذْهَبُوْا حَتّٰى يَسْتَاْذِنُوْهُ ۭ

"और जब वो किसी इज्तमाई काम के ज़िमन में रसूल ﷺ के साथ होते हैं तो वहाँ से जाते नहीं जब तक कि उनसे इजाज़त ना ले लें।"

नबी मुकर्रम ﷺ के बाद यही हुक्म आप ﷺ के जानशीनों और इस्लामी नज़्म जमाअत के उमरा (leaders) के लिए है। इस हुक्म के तहत किसी जमात के तमाम अरकान को एक नज़्म (discipline) का पाबंद कर दिया गया है। अगर ऐसा नज़्म व ज़ब्त इस जमात के अंदर नहीं होगा तो किसी काम या मुहिम पर जाते हुए कोई शख़्स इधर खिसक जायेगा, कोई उधर चला जायेग। ऐसी सूरतेहाल में कोई भी इज्तमाई काम पाया-ए-तकमील को नहीं पहुँच सकता। चुनाँचे इस हुक्म के तहत लाज़मी क़रार दे दिया गया कि किसी मजबूरी या उज़्र वग़ैरह की सूरत में अगर कोई रुख़सत चाहता हो तो मौक़े पर मौजूद अमीर से बाक़ायदा इजाज़त लेकर जाये।

اِنَّ الَّذِيْنَ يَسْتَاْذِنُوْنَكَ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ۚ

"यक़ीनन जो लोग आप ﷺ से इजाज़त तलब करते हैं वही हैं जो ईमान रखते हैं अल्लाह पर और उसके रसूल ﷺ पर।"

فَاِذَا اسْتَاْذَنُوْكَ لِبَعْضِ شَاْنِهِمْ فَاْذَنْ لِّمَنْ شِئْتَ مِنْهُمْ

"फिर जब वो आप ﷺ से इजाज़त माँगें अपने किसी उज़्र की वजह से तो आप उनमें से जिसको चाहें इजाज़त दे दीजिए"

रुख़सत देने का इख़्तियार तो आप ﷺ ही के पास है। यानि इस्लामी नज़्म जमात के लिए यह उसूल दे दिया गया कि इज्तमाई मामलात में रुख़सत देने का इख़्तियार अमीर के पास है। चुनाँचे अमीर या कमांडर अपने मिशन की ज़रूरत और दरपेश सूरतेहाल को देखते हुए अगर मुनासिब समझे तो रुख़सत माँगने वाले को इजाज़त दे दे और अगर मुनासिब ना समझे तो इजाज़त ना दे। चुनाँचे कोई भी मा-तहत या मामूर शख़्स इजाज़त माँगने के बाद रुख़सत को अपना लाज़मी इस्तहक़ाक़ ना समझे।

وَاسْتَغْفِرْ لَهُمُ اللّٰهَ ۭ

"और उनके लिए अल्लाह से इस्तग़फ़ार कीजिए।"

इसलिए कि वह इज्तमाई काम जिसके लिए हुज़ूर ﷺ अहले ईमान की जमात को साथ लेकर निकले हैं, आप ﷺ का ज़ाती काम नहीं बल्कि दीन का काम है। अब अगर इस दीन के काम से कोई शख़्स रुख़सत तलब करता है तो इसका मतलब यह है कि उसने अपनी ज़ाती काम को दीन के काम पर तरजीह दी है और ज़ाती काम के मुक़ाबले में दीन के काम को कम अहम समझा है। बज़ाहिर यह एक बहुत संजीदा मामला और नाज़ुक सूरतेहाल है, इसलिए फ़रमाया जा रहा है कि ऐसे लोगों के लिए अल्लाह से मग़फ़िरत की दुआ करें।

اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ؁62

"यक़ीनन अल्लाह बहुत बख़्शने वाला, बहुत रहम करने वाला है।"

यहाँ यह नुक्ता नोट कीजिए कि यही मज़मून सूरह अत्तौबा में भी आया है, लेकिन वहाँ इसकी नौइयत बिल्कुल मुख्तलिफ़ है। इस फ़र्क़ को यूँ समझिये कि सूरह नूर 6 हिजरी में नाज़िल हुई थी, जबकि सूरह अत्तौबा 9 हिजरी में। इस्लामी तहरीक लम्हा-ब-लम्हा अपने हदफ़ की तरफ़ आगे बढ़ रही थी। हालात बतदरीज तब्दील हो रहे थे और हालात के बदलने से तक़ाज़े भी

बदलते रहते थे। चुनाँचे यहाँ (6 हिजरी) फ़रमाया जा रहा है कि जो लोग आप ﷺ से बाक़ायदा इजाज़त तलब करते हैं वो वाक़ई ईमान वाले हैं, जबकि तीन साल बाद सूरह अत्तौबा में गज़वा-ए-तबूक के मौक़े पर फ़रमाया गया कि जो ईमान रखते हैं वो इजाज़त लेते ही नहीं। दरअसल वह इमरजेंसी का मौका था और उस मौक़े पर गज़वा-ए-तबूक के लिए निकलना हर मुसलमान के लिए लाज़िम कर दिया गया था। ऐसे मौक़े पर किसी शख़्स का रुख्सत तलब करना ही इस बात की अलामत थी कि वह शख़्स मुनाफ़िक़ है। चुनाँचे वहाँ (सूरह अत्तौबा, आयत 43 में) रुख्सत देने से मना फ़रमाया गया: {عَفَا اللّٰہُ عَنْكَ ۚ لِمَ اَذِنْتَ لَهُمْ} "अल्लाह आप ﷺ को माफ़ फ़रमाये (या अल्लाह ने आपको माफ़ फ़रमा दिया) आप ﷺ ने ऐसे लोगों को क्यों इजाज़त दे दी?" अगर आप इजाज़त ना भी देते तो यह लोग फिर भी ना जाते लेकिन इससे उनके निफ़ाक़ का पर्दा तो चाक हो जाता! इसके बरअक्स यहाँ हुज़ूर ﷺ को इख़्तियार दिया जा रहा है कि आप ﷺ जिसे चाहें रुख्सत दे दें।

इस मज़मून को एक दूसरे ज़ाविये से देखें तो ऐसे मौक़ों पर किसी इस्लामी जमाअत के अफ़राद के दरमियान हमें तीन सतहों पर दर्जाबंदी होती नज़र आती है। पहला दर्जा उन अरकान है जो अपने आपको दीन के काम के लिए हमातन वक़्फ़ कर चुके हैं। उनके लिए दुनिया का कोई काम इस काम से ज़्यादा अहम और ज़रूरी नहीं है। लिहाज़ा उनके रुख्सत लेने का कोई मौक़ा व महल है ही नहीं। इससे निचला दर्जा उन अरकान का है जो ऐसे मौक़े पर किसी ज़ाती मजबूरी और ज़रूरत के तहत बा-क़ायदा इजाज़त लेकर रुख्सत लेते हैं, जबकि इससे निचले दर्जे पर वो लोग हैं जो इजाज़त के बग़ैर ही खिसक जाते हैं। गोया उनका दीन के इस काम से कोई ताल्लुक़ ही नहीं था। इस दर्जा बंदी में ऊपर वाले ज़ीने के ऐतबार से अग़रचे दरमियान वाला ज़ीना कमतर दर्जे में है लेकिन निचले ज़ीने के मुक़ाबले में बहरहाल वह भी बेहतर है।

यह बात हमारे मुशाहिदे में है कि इस्लामी जमातों के इज्तमाआत के मौक़े पर बाज़ रुफ़क़ा ना तो इज्तमा में शामिल होते हैं और ना ही अपने नज़्म से रुख्सत लेते हैं। ना वह पहले बताते हैं ना ही बाद में माज़रत करते हैं। गोया उन्हें कोई अहसास ही नहीं, ना नज़्म की पाबंदी का और ना ही अपनी ज़िम्मेदारी का। उनसे वो रुफ़क़ा यक़ीनन बेहतर हैं जो अपना उज़्र पेश करके अपने अमीर से बा-क़ायदा रुख्सत लेते हैं। लेकिन इन सब दर्जात में सबसे ऊँचा दर्जा बहरहाल यही है कि दीन के काम के मुक़ाबले में दुनिया के किसी काम को तरजीह ना दी जाये। इस दर्जे पर फ़ायज़ लोगों के ज़ाती काम अल्लाह के ज़िम्मे होते हैं। वो अपने कामों को पसे-पुश्त डाल कर अल्लाह के काम के लिए निकलते हैं तो उनके कामों को अल्लाह ख़ुद सँवारता है।

आयत 63

لَا تَجْعَلُوْا دُعَاۗءَ الرَّسُوْلِ بَيْنَكُمْ كَدُعَاۗءِ بَعْضِكُمْ بَعْضًا ۭ

"तुम लोग रसूल ﷺ के बुलाने को ऐसे ना समझ लो जैसे तुम्हारा आपस में एक-दूसरे को बुलाना।"

यानि रसूल अल्लाह ﷺ का बुलावा ग़ैरमामूली अहमियत रखता है। किसी दूसरे शख़्स के बुलाने पर तुम ना जाओ तो कोई बड़ी बात नहीं, लेकिन रसूल

ﷺ के बुलाने पर तुम लब्बैक ना कहो तो अपने ईमान की ख़ैर मनाओ। अब एक बुलाना यह भी है कि किसी शख़्स को उसके किसी दोस्त ने अपने घर खाने की दावत दी और दूसरी तरफ़ रसूल अल्लाह ﷺ ने भी किसी को अपने यहाँ खाने की दावत दी। ऐसी सूरत में रसूल अल्लाह ﷺ की दावत कजा और एक आम आदमी की दावत कजा! लेकिन एक बुलाना अल्लाह के रास्ते में जिहाद के लिए बुलाना है कि एक तरफ़ रसूल अल्लाह ﷺ लोगों को बुला रहे हैं कि आओ अल्लाह की राह में मेरे साथ चलो और दूसरी तरफ़ कोई आम शख़्स किसी दूसरे शख्स को अपनी मदद के लिए बुला रहा है तो रसूल अल्लाह ﷺ के बुलाने और एक आम आदमी के बुलाने में ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ है।

"دُعَآءَ الرَّسُوْلِ" का एक मफ़हूम "रसूल ﷺ को पुकारना" भी है। यानि जैसे तुम लोग आपस में एक-दूसरे को मुख़ातिब करते हो, रसूल अल्लाह ﷺ को तुम ऐसे मुख़ातिब नहीं कर सकते। आप ﷺ के अदब व अहतराम के बारे में सूरतुल हुजरात में बहुत वाज़ेह हिदायात दी गई हैं:

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَرْفَعُوْٓا اَصْوَاتَكُمْ فَوْقَ صَوْتِ النَّبِيِّ وَلَا تَجْهَرُوْا لَهٗ بِالْقَوْلِ كَجَهْرِ بَعْضِكُمْ لِبَعْضٍ اَنْ تَحْبَطَ اَعْمَالُكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تَشْعُرُوْنَ

"ऐ ईमान वालो! अपनी आवाज़ें नबी करीम ﷺ की आवाज़ पर बुलंद ना करो और ना आप ﷺ से ऊँची आवाज़ में बात करो जैसे तुम एक-दूसरे से ऊँची आवाज़ में बात करते हो, कहीं तुम्हारे सारे आमाल बर्बाद ना हो जायें और तुम्हें पता भी ना चले।" सूरतुल हुजरात के मुताअले के दौरान इस बारे में मज़ीद तफ़सील से बात होगी।

قَدْ يَعْلَمُ اللّٰهُ الَّذِيْنَ يَتَسَلَّلُوْنَ مِنْكُمْ لِوَاذًا ۚ

"अल्लाह ख़ूब जानता है तुम में से उन लोगों को जो एक-दूसरे की ओट लेकर खिसक जाते हैं।"

यह ऐसे लोगों का ज़िक्र है जिनकी नीयत में पहले से ही फ़ितूर होता है। ऐसे लोगों का मामला यूँ होता है कि जब लोग किसी मुहिम के लिए निकले तो यह भी निकल पड़े। फिर जब देखा कि उनका नाम जाने वालों में शामिल हो चुका है तो उसके बाद आँख बचा कर चुपके से एक-दूसरे की आड़ लेते हुए खिसक गये। या इसकी एक सूरत यह भी हो सकती है कि किसी इज्तमा में शरीक हुए, वहाँ अचानक किसी मुहिम के लिए कुछ रज़ाकारों की ज़रूरत पड़ गई तो अब उससे पहले कि रज़ाकारों के नाम पूछने का मरहला आता, यह आँख बचा कर वहाँ से खिसक गये।

فَلْيَحْذَرِ الَّذِيْنَ يُخَالِفُوْنَ عَنْ اَمْرِهٖٓ اَنْ تُصِيْبَهُمْ فِتْنَةٌ اَوْ يُصِيْبَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ 63

"तो जो लोग रसूल ﷺ के हुक्म की मुख़ालफ़त करते हैं उन्हें डरना चाहिए कि उन पर कोई आज़माईश आ जाये या उनको कोई दर्दनाक अज़ाब आ पकड़े।"

आयत 64

اَلَآ اِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ قَدْ يَعْلَمُ مَآ اَنْتُمْ عَلَيْهِ ۭ

"आगाह हो जाओ! यक़ीनन अल्लाह ही के लिए है जो कुछ आसमानों में और ज़मीन

में है। वो ख़ूब जानता है तुम जिस हाल पर हो।"

अल्लाह को खूब मालूम है कि तुम ईमान व यक़ीन के हवाले से किस मक़ाम पर खड़े हो। वह तुम्हारे ईमान की कैफ़ियत, नीयत के इख्लास और अमल की तड़प को बहुत अच्छी तरह जानता है।

"और जिस दिन यह लोग लौटाए जायेंगे उसकी तरफ़ तो वो उन्हें जतला देगा जो कुछ भी अमल उन्होंने किये होंगे।"

وَيَوْمَ يُرْجَعُوْنَ اِلَيْهِ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا عَمِلُوْا ۭ

"और अल्लाह हर चीज़ का इल्म रखने वाला है।"

وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝64

بارک اللہ لی و لکم فی القرآن العظیم و نفعنی و ایا کم بالآیات والذکر الحکیم۔